मुक्तक-कुसुमांजलि

सम्पादक
डा० राधेश्याम शर्मा
सहायक आचार्य
हिन्दी विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

बुक लैण्ड पब्लिशर्स
लालजी सांड का रास्ता, जयपुर-3

प्रकाशक

☐ राजेश अग्रवाल
बुक लैण्ड पब्लिशर्स
लालजी सांड का रास्ता, जयपुर-3

☐ प्रथम संस्करण 1990

☐ मूल्य 20.00 रु०

☐ मुद्रक अजन्ता प्रिन्टर्स
जयपुर।

आमुख

'मुक्तक कुसुमांजलि' स्नातकोत्तर कक्षा के पाठ्यक्रम को दृष्टिगत रखकर तैयार किया गया मुक्तक काव्य का सकलन है। इसमें अपभ्रंश के कवि योगीन्दुदेव (छठी-सातवी शती) से लेकर दुष्यन्त कुमार तक के विशिष्ट कवियों की चुनी हुई रचनाएँ सगृहीत की गई हैं। रचनाओ के चयन मे गुणात्मकता और विविधता के साथ इस बात का ध्यान रखा गया है कि मुक्तक काव्य परम्परा का विकासात्मक स्वरूप स्पष्ट हो सके।

भूमिका मे मुक्तक के स्वरूप, वर्गीकरण तथा विकास के साथ सकलित मुक्तककार एव उनकी रचनाओं का परिचय दिया गया है। इस विवेचन मे मुक्तक-काव्य से सम्बन्धित सभी पहलुओ पर दृष्टिपात करते हुए विद्यार्थियो को स्वतन्त्र चिन्तन की दिशा दी गई है, जो काव्य के मूल्यांकन के लिए उपयोगी है।

अन्त मे शब्दार्थ और टिप्पणी दिए गए हैं। योगीन्दुदेव के सभी सकलित दोहो का सरलार्थ भी स्पष्ट किया गया है। आशा है, यह सकलन विद्यार्थियों के लिए उपादेय होगा।

—सम्पादक

विषय-क्रम

भूमिका

मुक्तक परिभाषा एव स्वरूप

मुक्त शब्द मे सशार्थक 'कन्' प्रत्यय जोडन से 'मुक्तक शब्द बनता है जिसका अथ है—वह रचना जो अपना अथ व्यक्त करने के लिए पूर्वापर छन्द पर आश्रित न होकर अपने-आप मे पूण होती है। अग्निपुराण मे कहा है

मुक्तक श्लोक एवैकश्चमत्कारक्षम सताम्'

अर्थात् मुक्तक एक ही श्लोक मे सहृदयो के हृदय म चमत्कार उत्पन्न करन म सक्षम होता है। प्रबन्ध रचना के समान इसमे कथासूत्र एव प्रवाह नही होता। मुक्तक अथ की अभिव्यक्ति मे स्वत पूण होने के साथ सहृदयो को आह्लादित करने मे भी समथ होता है। इस लक्षण के अनुसार रसास्वाद मे सक्षम होना, उसका एक आवश्यक गुण है। 'अग्निपुराण के उपरान्त ध्वन्यालोक के टीकाकार आचाय अभिनवगुप्त ने लिखा है

'मुक्तम येनाऽसिगितम्। पूर्वापर निरपेक्षेणापि हि येन रसचवणा क्रियते तदव मुक्तकम्।

अर्थात् जिसका लगाव पूव और पर पद्यो से न हो तथा स्वतन्त्र रूप से अथ-द्योतन तथा रसोद्रेक मे समथ हो उसे मुक्तक कहते हैं।

हेमचन्द्राचाय ने अनिबद्ध मुक्तकादि कहकर सभी स्फुट रचनाओ को मुक्तक के अन्तगत बताया है। दण्डी और वामन ने मुक्तक का स्वतन्त्र काव्यरूप न मानकर उसे प्रबन्ध काव्य का अग माना है। दण्डी न 'मुक्तक काव्य' नाम तो नही दिया पर उन्होंने समबद्ध या प्रबन्ध काव्य के समस्त रूपो का एक प्रकार का तथा उनसे भिन्न निबन्ध रचनाओ को अन्य प्रकार का बताया है। आचाय विश्वनाथ ने साहित्य दपण मे अनिबद्ध काव्य को मुक्तक माना है—

'छन्दोबद्धपद पद्य तेन मुक्तेन मुक्तकम्

उपयुक्त विवेचन से स्पष्ट है कि अपने मे पूण तथा अन्य छन्द निरपेक्ष रचना को सभी आचार्यों ने मुक्तक कहा है। यह प्रबन्ध काव्य का अग न होकर

स्वतन्त्र काव्यरूप है, जिसकी अपनी विशेषता है। मुक्तक काव्य की तीन प्रमुख विशेताए हैं—नियघता सक्षिप्तता और सरसता। मुक्तक मे एक ही भाव स्थिति या विचार का गहरा वणन होता है जीवन का विस्तृत चित्रण नही। अत मुक्तककार क रूप मे वही कवि सफल हो सकता है जिसम भावो को समटने तथा सारत अभिव्यक्त करने की क्षमता का अद्भुत समन्वय हो। आचाय शुक्ल क शब्दो म 'इसक लिए कवि को मनारम वस्तुओ और व्यापारो का एक छोटा सा स्तवक कल्पित करना पडता है। अत जिस कवि म कल्पना की समाहार शक्ति के साथ भाषा की समास शक्ति जितनी अधिक होगी उतना ही वह मुक्तक की रचना मे सफल होगा।'

मुक्तक काव्यत्व की दष्टि से प्रब ध की अपेक्षा विशिष्ट होते हैं। रसध्वनि को श्रेष्ठ काव्य मानने वाले आचाय आनन्दवधन ने कहा है

'अमरुक कवेरेक श्लोक प्रबन्धशतायत

अर्थात् अमरुशतक का एक एक श्लोक सैकडा प्रबन्धो से अधिक रमणीय है क्योकि उसके भीतर सरस प्रसगो की योजना इस कौशल स की गई है कि श्लोक को पढते ही पाठक भावमग्न हो जाता है। हिन्दी म सूरदास का सूरसागर तुलसीदास की कवितावली गीतावली आदि रचनाए तथा बिहारी सतसई आदि मुक्तक काव्य परम्परा के अनमोल रत्न हैं। मुक्तककार का कौशल अनावश्यक प्रसगो के त्याग एव सरस स्थितियो के चयन म निहित होता है। प्रबन्ध काव्य को विशिष्ट मानने वाले आचाय शुक्ल ने मुक्तक को चुना हुआ गुलदस्ता बताकर प्रकारान्तर स उसक महत्त्व को स्वीकार किया है। प पद्मसिंह शर्मा न भी मुक्तक को मीठी रोटी के सदृश मधुर बताया है। वस्तुत मुक्तक रस से परिपूण ऐसी सम्पुटिका है जो भावोन्मेष के क्षणो म पाठक को सहसा चमत्कृत कर उसक मन पर स्थायी प्रभाव छोडती है। डा रामसागर त्रिपाठी लिखते हैं

मुक्तक का अथ होगा —ऐसा पद्य जो परत निरपेक्ष रहते हुए पूण अथ की अभिव्यक्ति मे समथ हो काव्य के लिए अपेक्षित चमत्कृति इत्यादि विशेषताओं से युक्त हो अपनी काव्यगत विशेषताओं के कारण जो आनन्द देने मे समथ हो जिसका गुम्फन अत्यन्त रमणीय हो और जिसका परिशीलन ब्रह्मानन्द सहोदर चवणा के प्रभाव से हृदय की मुक्तावस्था प्रदान करने वाला हो' इस प्रकार मुक्तक शब्द की सार्थकता रूप की दृष्टि से निबन्ध होने व प्रभाव की दष्टि हृदय को मुक्त दशा (आनन्दावस्था) मे पहुचाने मे देखी जा सकती है। कवि कम की

दृष्टि से मुक्तक रचना प्रबन्ध की अपेक्षा दुष्कर होती है। इसके अनेक कारण हैं—एक बात तो यह है कि प्रबन्ध काव्य में पाठक का मन कथा निर्वाह की रोचकता से बँधा रहता है। आगे की घटना और परिस्थिति को जानने के लिए चित्त इतना उत्सुक रहता है कि बीच में आये अनेक दोषों की ओर हमारा ध्यान ही नहीं जाता। अगर अनायास किसी दोष पर दृष्टि पड जाए तो हम कथा के परिणाम को जानने की आकुलता में तुरत आगे बढ जाते हैं। दूसरी बात यह है कि प्रबन्ध के पात्रो से हम इस कदर जुड जाते हैं कि उनके क्रियाकलापो में हम गहरी रुचि लेने लगते हैं। पात्रो के सम्बन्ध में हमारी एक धारणा बन जाती है और हम प्रबन्धगत अन्य दोषो का अनदेखा कर देते हैं। प्रबन्ध के अन्तर्गत कथा प्रवाह में प्रसग से जुडकर नीरस रचना भी सरस हो जाती है। एक उदाहरण में यह बात स्पष्ट की जा सकती है। तुलसी के रामचरितमानस के अनेक नीरस दोहे उनके मुक्तक-सग्रह दोहावली में दिए हुए है। एक दोहा देखिए

सरनागत कहुँ जे तजहिं निज अनहित अनुमानि।
ते नर पामर पापमय तिन्हहिं बिलोकत हानि।

दोहावली में यह दोहा एक सामान्य नीति कथन के रूप में आता है जिसका अर्थ शरण में आये हुए व्यक्ति को शरण न देने वाला पापी है और उसका मुँह भी नहीं देखना चाहिए। इस कथा में कोई रसात्मकता नहीं है। यह दोहा मात्र सूक्ति कहा जा सकता है। इसके विपरीत 'रामचरित मानस में यह दोहा विभीषण की शरणागति के प्रसग में उस समय कहा गया है जबकि राम के परामर्शदाता विभीषण को शत्रु पक्ष का बताकर उसे शरण में न लेने की सलाह देते हैं। ऐसी स्थिति में यह दोहा पाठक के मन में राम की शरणागतवत्सलता का भाव जगाने में समर्थ होता है। यह प्रबन्धगत परिस्थिति का प्रभाव है कि एक सामान्य सूक्ति भी भावव्यंजक हो जाती है।

मुक्तक के भेद

संस्कृत के आचार्यों ने मुक्तक के अनेक भेद किये हैं। दण्डी के अनुसार मुक्तक के मुख्य भेद तीन हैं—मुक्तक कुलकोश और सघात। आनन्दवर्धन के अनुसार मुक्तक सदानितक विशेषक कलापक, कुलक और पर्यायबन्ध—छह प्रकार के मुक्तक हैं। हेमचन्द्र ने मुक्तक काव्य के भेद इस प्रकार माने है—मुक्तक सदानितक, विशेषक कलापक कुलक कोश प्रघट्टक विकीर्णक और सघात। विश्वनाथ ने साहित्य दर्पण में मुक्तक काव्य के भेद इस प्रकार किए हैं—

1 मुक्तक—अर्थ की दृष्टि से अपने आप में पूर्ण एक श्लोक।

2 युग्मक या सन्दानितक—दो श्लोकों में पूर्ण अर्थ व्यक्त करने वाली रचना।

3 विशेषक—वह रचना जिसका अर्थ (अन्वय) तीन श्लोकों में पूर्ण होता है।

4 कलापक—चार श्लोकों वाली रचना है।

5 कुलक—पाँच श्लोकों वाली रचना। हेमचन्द्र ने इस भेद में श्लोक-संख्या पाँच से चौदह तक मानी है।

6 कोश—इसमें मुक्तकों का समूह होता है। आचार्य हेमचन्द्र का मानना है कि किसी एक कवि या अनेक कवियों की सूक्तियों के संग्रह को कोश कहते हैं।

7 प्रघट्टक—एक कवि के मुक्तक-संग्रह को प्रघट्टक कहते हैं। जैसे गाथा सप्तशती बिहारी सतसई आदि।

8 विकीर्णक—अनेक कवियों के लिखे हुए मुक्तकों का संग्रह।

9 संघात या पर्यायबन्ध—एक कवि द्वारा एक विषय पर लिखे गए मुक्तकों को यह नाम दिया गया है।

उक्त वर्गीकरण से स्पष्ट है कि बन्ध की दृष्टि से मुक्तक काव्य का आकार केवल एक श्लोक तक सीमित नहीं था। विद्वानों ने श्लोक संख्या के सम्बन्ध में विभिन्न मत व्यक्त किये हैं पर इस बात में सभी एकमत हैं कि मुक्तक रचना अर्थ की दृष्टि से स्वतः में पूर्ण होती है।

डा रामसागर त्रिपाठी ने विषय वस्तु की दृष्टि से मुक्तकों का चार भागों में विभक्त किया है—

1 रसात्मक मुक्तक—इनमें रसचर्वणा या भावव्यंजना कराने वाले सभी मुक्तक आ जाते हैं।

2 धार्मिक मुक्तक—देवता विषयक रति से सम्बन्ध रखने वाले सभी मुक्तकों का इस वर्ग में समावेश हो जाता है।

3 प्रशस्ति मुक्तक—राजाओं की दानवीरता को आधार बनाकर लिखे गये मुक्तक इसमें रखे जा सकते हैं।

4 सूक्ति मुक्तक—ऐसे मुक्तकों में लोकनीति तथा चमत्कार आदि वर्ण्य विषय होते हैं। इनमें भाव व्यंजना न होकर मात्र तथ्य कथन होता है जो उक्ति वैचित्र्य के कारण चमत्कारपूर्ण होता है।

माध्यम की दृष्टि से भी मुक्तक काव्य के दो भेद किये जा सकते हैं—

1 पाठ्य मुक्तक—पाठ्य मुक्तक कवि की तरल अनुभूति को रूपायित करते है पर उनमे गेयता नही होती।

2 गीति मुक्तक—इन मुक्तको मे कवि की तीव्र अनुभूति का आवेग सगीतात्मकता लेकर बाहर फूट पडता है।

संस्कृत काव्यशास्त्र मे निरूपित मुक्तक काव्य के उपयुक्त भेदो को देखकर यह निष्कर्ष निकालना उचित होगा कि विषयवस्तु रूप सख्या आदि की दृष्टि से मुक्तक के अनन्त भेद हो सकते हैं। हिन्दी मे मुक्तक काव्य के जितने रूप मिलते हैं वे संस्कृत काव्यशास्त्र मे परिगणित नही है और जिनका उल्लेख संस्कृत मे हैं उनमें से अनेक हिन्दी मे प्रचलित नहीं हैं। कारण स्पष्ट है प्रत्येक भाषा के साहित्य और काव्यरूपो के विकास का स्तम्भ इतिहास होता है। देश, काल के अनुसार साहित्य का विकास होता है अत परिवर्तित परिस्थितियो के अनुसार साहित्य की विषयवस्तु व रूपसज्जा मे परिवर्तन होता है। फलत पुराने मानदण्ड बदलते रहते हैं और नये साहित्य के आधार पर साहित्य के निकष बनते रहते हैं। हिन्दी ने एक ओर लोकभाषाओ मे प्रचलित मुक्तक के काव्यरूपो को ग्रहण किया है तो दूसरी ओर विदेशी काव्यरूपो को अपने ढग से आत्मसात् किया है। इस दृष्टि से डा शभुनाथ सिह ने हिन्दी साहित्य कोश, भाग–1 मे हिन्दी मुक्तको का वर्गीकरण इस प्रकार किया है—

1 सख्याश्रित मुक्तक काव्य—सग्रह के पद्यो की सख्या के आधार पर यह विभाजन किया गया है। जैसे एक हजार मुक्तको का सग्रह हजारा कहलाता है—इस निधि का रतन हजार। इसी प्रकार अन्य सख्याश्रित मुक्तको के नाम गिनाये जा सकते हैं—नीतिशतक (भर्तहरि) शिवा बावनी (भूषण) हनुमान चालीसा (तुलसीदास), देव पचीसी (देव) खटमल बाईसी (प्रीतम) आदि।

2 वर्णमालाश्रित मुक्तक काव्य—इसमे प्रत्येक पक्ति वर्णमाला के अक्षर क्रम से प्रारम्भ होती है। उदाहरणार्थ ककहरा (महाराज विश्वनाथ सिंह) अखरावट (जायसी)।

3 छन्दाश्रित मुक्तक—बहुत लोकप्रिय छन्दो पर आश्रित मुक्तक इसमे सन्निविष्ट होते हैं। जैसे अपभ्रश मे 'पाहुड दोहा', हिन्दी मे ढोला मारू रा दूहा शृगार सोरठा (रहीम) कवितावली (कवित्त छन्द मे लिखी तुलसीदास की रचना) आदि।

4 रागाश्रित मुक्तक—सगीतशास्त्र या लोकप्रचलित गीतो के प्रभाव मे लिखी हुई रचनाए इसमे आती हैं। अपभ्रश और हिन्दी के राससज्ञक काव्यो

का प्रणयन रागाश्रित है। लावनी' राग म लिखे 'रहस लावनी (नवलसिंह), दवीसिंह की लावनिया आदि काव्य इस कोटि के है।

5 ऋतु उत्सव आश्रित मुक्तक—ऐसे काव्यो म 'आदिनाथ फाग, 'नेमिनाथ फाग' होरी की माल फाग विहार (दानो नागरीदास रचित), आदि हैं।

6 पूजा धम-आश्रित मुक्तक—इसमे स्तोत्र साहित्य, साखी भजन आदि धार्मिक मुक्तक सन्निविष्ट हो जाते हैं। जैसे ऋषभजिन स्तुति (दवसेन), शिव स्तोत्र (गिरिधरदास), साखी (नागरीदास) आदि।

7 लोकाश्रित—मुकरी, पहले, कहावत, ढकोसला आदि मुक्तक इस वग मे आते हैं।

8 फारसी काव्यरूप—गजल, रुबाइया चतुष्पदी आदि।

9 अंग्रेजी काव्यरूप—द्विपदी (कप्लेट) चतुर्दशपदी (सानेट), शोकगीति (एलेजी), गीति या प्रगीत मुक्तक (लिरिक)।

10 साहित्य शास्त्राश्रित—छन्द रस ध्वनि आदि के लक्षण और उदाहरण आदि के छन्द।

11 अन्य फुटकर काव्यरूप—अष्टयाम दूतकाव्य, नखशिख काव्य आदि।

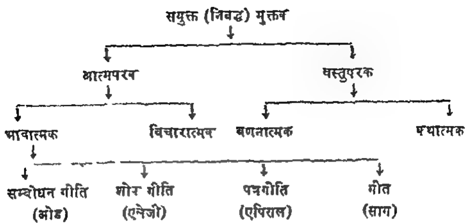
डा निर्मला जैन ने मुक्तक काव्य के भेदोपभेद इस प्रकार किए हैं जो हिन्दी के सन्दभ म उपयुक्त और सटीक हैं—

(1) स्फुट मुक्तक—संस्कृत काव्य शास्त्र म मुक्तक काव्य का जो लक्षण निर्धारित किया है उसके अन्तगत स्फुट मुक्तक रखे जा सकते हैं। ये पूर्वापर क्रम निरपेक्ष स्वतन्त्र अथ की अभिव्यक्ति मे समथ तथा रसपूण होते हैं। इसके उपभेद इस प्रकार हैं—

(क) आत्मपरक—(1) भावात्मक और (2) विचारात्मक।

(ख) वस्तुपरक—(1) वणनात्मक और (2) कथाश्रित।

(2) संयुक्त मुक्तक—ऐसे मुक्तकों से आशय अनेक छन्दो मे विरचित ऐसी रचना से है जिनमें प्रबन्ध की भांति दूर तक कथा निबन्धन तो नही होता पर ये छन्द भावान्विति की दृष्टि से सापेक्ष होते हैं। डा निर्मला जन के शब्दो म 'यह विधा मुक्तक इसलिए स्वीकार की जाती है क्योंकि इसमे कवि प्रबन्ध की भांति किसी क्रमिक नही क्षणिक अनुभूति को व्यक्त करता है। संयुक्त यह इसलिए है कि व्यक्त अनुभूति क्षणिक होते हुए भी एक से अधिक छन्दो म प्रवाहित रहती है। इसके उपभेद इस प्रकार हैं—



स्फुट मुक्तक तथा सयुक्त मुक्तक के उपयुक्त उपभेदो मे हिन्दी मे प्रयुक्त प्राय सभी मुक्तक काव्य रूपो का समावेश हो जाता है। उर्दू फारसी के प्रभाव मे गृहीत मुक्तको को भी इसम सम्मिलित किया जा सकता है।

मुक्तक-काव्य का विकास

रसात्मक मुक्तक परम्परा को निम्नलिखित काल खण्डो मे विभाजित किया जा सकता है—

1 प्रकृति काल—इसे प्रारम्भिक काल या हाल (गाहा सतसई के रच यिता) से पूववर्ती काल कहा जा सकता है। इस काल की रचनाओ म प्रकृति वणन की प्रधानता है अत इसे प्रकृति-काल नाम दिया गया है। इसमे वैदिक काल तथा बौद्ध जैन काल की रचनाए आती है।

मुक्तक रचना की परम्परा का प्रारम्भ ऋग्वेद स होता है। जाज ग्रियसन की मान्यता है कि 'मुक्तक काव्य धारा का गोमुख निश्चय ही ऋग्वेद है। ऋग्वेद मूलत यज्ञपरक रचनाओ का सकलन है, पर कलात्मक और रसात्मक मुक्तको का भण्डार भी है। उसमे प्रकृति सौन्दय के सरस चित्र राशि राशि बिखरे मिलत हैं। सूय चन्द्रमा, मेघ विद्युत् व्योम नक्षत्र उषा रात्रि आदि क दृश्यो का मनोहारी वणन ऋग्वेद को काव्यमय बना देता है। प्रकृति चित्रण का सर्वोत्तम उदाहरण ऋग्वेद का उषस सूक्त है। वैसे तो जातीय सघष का चित्रण होने के कारण वेद मे वीर रस की प्रधानता है, पर उसमे शृगार हास्य करुण, और

शान्त रस भी मिलते हैं। कलात्मक मुक्तकों के अतिरिक्त ऋग्वेद में धार्मिक एवं नीति सम्बन्धी मुक्तक भी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होते हैं।

'थेरी गाथा'—ऋग्वेद के बाद इस काल की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण भावात्मक रचना है। इसमें बौद्ध सन्यासियों के जीवन का उपदेशात्मक चित्र मिलता है। नारियों द्वारा रचित होने से इनमें भावना की प्रधानता है। इनमें जीवन के विविध अनुभवों का भावपूर्ण वर्णन है।

'थेर गाथा'—मुक्तक काव्य परम्परा की अगली कड़ी है। ये गाथाएं थेरों ने कही हैं। थेर बौद्ध संघ में प्रवेश करने से पूर्व गृहस्थ थे। ये गाथाएं 264 थेरों की कही हुई हैं जो 1279 पद्यों में निबद्ध हैं। इन गाथाओं में नैतिक उपदेश तथा प्रकृति प्रेम का चित्रण हुआ है। विण्टरनित्ज ने लिखा है इन धार्मिक कविताओं में प्रकृति के मनमोहक चित्र भारतीय मुक्तक परम्परा के बहुमूल्य रत्न हैं।

जैन साहित्य के अन्तर्गत नान्दी और अनुद्वार योग नामक दो महान् ग्रन्थ मिलते हैं। इनमें जैन धर्म सम्बन्धी बातों के साथ काव्य रस पर विस्तार से लिखा गया है और शृंगार रस सम्बन्धी पद्य उदाहरण के रूप में दिए गए हैं।

2 प्राकृत काल—मुक्तक काव्य परम्परा का दूसरा चरण ईसा की प्रथम शताब्दी से प्रारम्भ होकर जयदेव (12वीं शती) तक चलता है। महाकवि हाल की 'गाहा सतसई' इस काल की प्रथम और उत्कृष्ट रचना है। इस काल में लोक जीवन से सम्बद्ध प्राकृत भाषा की रचनाओं का बाहुल्य था, अतः इस काल को यह नाम दिया गया है। इस की रचनाओं में ऋतु संहार (कालिदास) अमरु शतक (अमरुक) चौरपंचाशिका (बिल्हण) उल्लेखनीय हैं। विषयवस्तु की दृष्टि से इस काल की रचनाओं को दो भागों में बांटा जा सकता है—प्रकृति काव्य और नर काव्य। इन दोनों में प्रमुखता नर-काव्य की रही जिसके अन्तर्गत कवियों ने नारी-सौन्दर्य के चित्रण पर ही अपनी दृष्टि केन्द्रित की।

इस काल में संग्रह ग्रन्थ भी लिखे गये हैं जिनमें सुभाषित रत्नभाण्डागार विशेष प्रसिद्ध है। इन संग्रह ग्रन्थों में अनेक कवियों की कृतियों का उल्लेख मिलता है। कुछ कवियों ने मेघदूत की पंक्तियों को लेकर समस्यापूर्ति के रूप में काव्य लिखे जिनमें शीलदूत, नेमिदूत, पार्श्वाभ्युदय सन्देश रासक उल्लेखनीय हैं।

इस काल में प्राकृत और अपभ्रंश भाषाओं में मुक्तक लिखे गये पर इन दोनों भाषाओं के मुक्तकों की क्रमबद्ध परम्परा नहीं मिलती। अपभ्रंश में जैन कवि जयवल्लभ कृत वज्जालग्ग एक प्रसिद्ध रचना उपलब्ध है जिसका काल

निश्चित नही है। इसम प्रेम सम्बन्धी पद्यो की बहुलता है। अपभ्र श के रसात्मक मुक्तको का सकलन हेमचन्द्र कृत प्राकृत व्याकरण मे उदाहरणो मे रुप मे देखा जा सकता है। इन उदाहरणो मे शृ गार रस के उत्कृष्ट पद्य मिलते हैं।

3 मध्यकाल—मुक्तक काव्य परम्परा के तृतीय चरण मे हिन्दी साहित्य के इतिहास के भक्तिकाल तथा रीतिकाल की रसात्मक रचनाए समाविष्ट हो जाती हैं। इस काल की प्रमुख रचनाए हैं—गीत गोविन्द (जयदव) विद्यापति की पदावली सूरसागर (सूरदास) तथा रसखान की सुजान रसखान, प्रेम वाटिका आदि है। प्रमुख मुक्तककार ह—अष्टछाप के कृष्णभक्त कवि, मीरा, तुलसीदास, पद्माकर, सुन्दरदास गग रहीम सेनापति आदि। उल्लेखनीय है कि रीतिकाल म मुक्तक-काव्य कलात्मक दृष्टि से उत्कर्ष पर पहुच गया था।

4 आधुनिक काल—इस काल खण्ड म हिन्दी साहित्य के इतिहास के आधुनिक काल म लिखे गय मुक्तक काव्य के विकास का विवचन अपेक्षित है। आधुनिक काल म मक्तक परम्परा रीतिकाल से होती हुई भारतेन्दु काल तथा द्विवेदी युग तक चली आई। भारतेन्दु काल मे मुक्तक परम्परा का विकास नही हो पाया। विवेच्यकाल म इसका प्रारम्भ द्विवेदी युग से होता है। द्विवेदी युग मे वणन प्रधान मुक्तक अधिक लिखे गये। इन मुक्तको मे इतिवत्तात्मकता मिलती है। राय देवीप्रसाद न 'नवल नागरी सुनगरी वणन तथा अलका वणन, इसी प्रकार क मुक्तक लिखे। कवि शकर ने भारतोदय मे देश सुधार सम्बन्धी षटपदिया लिखी। नखशिख वणन की चमत्कारपूण शैली म रायकृष्ण दास ने कुछ दोहे लिखे। वणनात्मक मुक्तको मे प्रकृति वणन और मानवरूप का वणन हुआ है।

आगे चलकर छायावाद के प्रवतन के साथ मुक्तक की विषयवस्तु और शैली दोनो मे ही क्रान्तिकारी परिवतन आया। विषयवस्तु की दृष्टि स ये रचनायें वस्तुप्रधान के स्थान पर हो गयी तथा स्फुट मुक्तक के स्थान पर सयुक्त मुक्तको का प्रचलन हुआ। अपवादरूप मे कुछ स्फुट मुक्तक भी लिख गये लेकिन इनकी सख्या बहुत कम है। इन मुक्तको मे प्रगीत रचना के तत्व अधिक मिलते है। निराला तथा अन्य छायावादी कवियो ने सयुक्त मुक्तको की रचना की। बच्चन ने हलाहल, मधुशाला आदि चतुष्पदिया लिखकर भावनाओ की अभिव्यक्ति के लिए मुक्तको का सहारा लिया।

प्रगतिवादी कवियो ने वैयक्तिक भावना के स्थान पर सामाजिक चेतना को आधार बनाकर मुक्तक लिखे। नरेन्द्र शर्मा ने भी मुक्तको की परम्परा को आग बढाया।

प्रयोगवाद के कवि जीवन के यथार्थ का चित्रण वैयक्तिक भावनाओं के आधार पर करने लगे। इन कवियों ने वस्तु की आन्तरिक अभिव्यंजना को भावना का रग चढ़ाये बिना व्यक्त करना प्रारम्भ किया। नये कवियों ने भी सयुक्त मुक्तक रचनायें लिखीं। इन कवियों पर उर्दू एव अंग्रेजी मुक्तक शैली का प्रभाव भी दिखाई देता है। आधुनिक काव्य में महापुरुषों के स्तवन और प्रशस्तिगान के रूप में भी कवितायें लिखी गई।

इस काल में अंग्रेजी शैली के मुक्तकों में सबोधन गीति, शोकगीति, गीत, चतुष्पदी विशेष रूप से लोकप्रिय हुये। उर्दू शैली के अन्तर्गत गजल, रुबाइयाँ आदि हिन्दी में भी प्रचलित हुईं। ☐

संकलित मुक्तककार

1 योगीन्दुदेव

(छठी सातवीं शताब्दी)

योगीन्दुदेव अपभ्रंश साहित्य के सबसे प्राचीन कवि है। डा ए एन उपाध्ये ने इनका समय छठी सातवी शताब्दी के बीच माना है। इनके रचे हुए 'परमात्म प्रकाश तथा योगसार आध्यात्मिक काव्य हैं। इन दोनो कृतिया की रचना तत्कालीन लोकभाषा अपभ्रंश मे हुई है। 'परमात्म प्रकाश' मे दो अधिकार (अध्याय) हैं। प्रथम अधिकार म 123 दोहे तथा द्वितीय म 214 दोहे सग्रहीत हैं। प्रथम अधिकार मे आत्मा के स्वरूप जीव द्रव्य एव जगत् का तात्विक विवेचन है। दूसरे अधिकार मे मोक्ष का स्वरूप, मोक्ष प्राप्ति के साधन, मोक्ष का फल, समाधि आदि विषयो पर विचार किया गया है। योगसार मे 108 दोहे हैं। इसमे आत्मतत्त्व पर प्रकाश डालते हुए अन्य पदार्थों से उसकी भिन्नता प्रतिपादित की गई है।

सकलित मुक्तका मे से प्रारम्भ के 21 'परमात्म प्रकाश' तथा शेष 5 योगसार से उद्धृत किये गये हैं। वतमान मे योगीन्दुदेव के इन दोहो के अध्ययन की उपयोगिता दो दृष्टियो से देखी जा सकती है। प्रथम, भाषा की दृष्टि म अपभ्रंश हिन्दी तथा प्राचीन भाषाओ के बीच की एक महत्त्वपूर्ण कडी है। सस्कृत पालि तथा प्राकृत भाषाओ के शब्द अपभ्रंश से हिन्दी मे आए है। आधुनिक हिन्दी के अनेक शब्दो की व्युत्पत्ति क अध्ययन मे अपभ्रंश भाषा और साहित्य के अध्ययन का महत्त्व असदिग्ध है। दूसरे ये रचनाए आज उच्च जीवन मूल्यो की चेतना से दूर होते हुए समाज को प्रगति की नई दिशा देकर उसे भटकाव म बचाने मे सहायक हो सकती है। भौतिक दृष्टि से चाहे हम कितना ही विकास करें अन्त करण की शुद्धि के बिना समाज म शांति की स्थापना नही हो सकती। आज का मनुष्य मानसिक तनाव की यातनाओ स गुजर रहा है। असुरक्षा, अलगाव सत्रास अविश्वास आदि ने सम्पूण विश्व म मनुष्य के अस्तित्व के लिए गहरा सकट उपस्थित कर दिया है। आध्यात्मिक साहित्य इन सब से त्राण दिला कर सुख और शांति की राह दिखा सकता है।

इस संकलन मे योगीन्दुदेव के 'परमात्म प्रकाश' तथा 'योगसार' से 26 दोहे लिए गए है जो तत्व चिंतन से सम्बन्धित होने के कारण विचार प्रधान हैं। इनमे आत्मा और अनात्म पदार्थों का पहचानने के लिए सम्यक दृष्टि विकसित करने की आवश्यकता बताई गई है। ईश्वर किसी पूजा स्थान मे रहकर प्राणिमात्र के चित्त मे निवास करता है जिसे समत्व भावना से प्राप्त किया जा सकता है। राग द्वेष आदि कषायो से मुक्त होने पर मोक्ष अर्थात् परमानन्द की प्राप्ति हो सकती है। पारिवारिक सामाजिक कर्तव्यो का निर्वाह करते हुए व्यक्ति ज्ञान साधना द्वारा आनन्दपूर्ण जीवन जी सकता है। इस रूप मे ये दोहे आचरण की शुद्धता द्वारा सामाजिक जीवन को समुन्नत करने का संदेश देते हैं। विचारो की प्रधानता से इन दोहो म अनुभूति—(भाव पक्ष) नगण्य है। शैली उपदेशात्मक है। अप्रस्तुत विधान की दृष्टि से उपमा रूपक आदि अलकारो का सुन्दर प्रयोग किया गया है।

2 तुलसीदास

(1532–1623 ई०)

तुलसीदास रामभक्ति धारा के प्रमुख कवि हैं। इनके लिखे हुए ग्रन्थ—राम चरित मानस गीतावली, विनयपत्रिका जानकी मगल, पार्वती मगल, रामलला नहछू दोहावली, कवितावली, रामाज्ञा, वैराग्य सदीपनी, कृष्णगीतावली तथा बरवै रामायण हैं।

इन सभी रचनाओं म विविध भावो का सुन्दर वर्णन हुआ है। रामकथा के विविध प्रसगो द्वारा तुलसीदास ने बिखरते हुए हिन्दू समाज के समक्ष आदर्श प्रस्तुत किए हैं जो उन्हे लोकनायक के रूप मे प्रतिष्ठित करते हैं। उनके आराध्य सगुण साकार अवतारी पुरुष राम हैं, जो प्राणिमात्र के हृदय मे ही नही ससार के कण-कण मे व्याप्त हैं। समस्त सृष्टि मे परमात्मा के स्वरूप का साक्षात्कार करने की भावना के कारण उनकी भक्ति एकान्त और लोकबाह्य न होकर सामाजिक चेतना से अनुप्राणित है। तुलसी का काव्य समन्वय का अनूठा उदाहरण है। डॉ हजारीप्रसाद द्विवेदी के शब्दो म 'उनम केवल लोक और शास्त्र का ही समन्वय नही है—गार्हस्थ्य और वैराग्य का भक्ति और ज्ञान का, भाषा और संस्कृति का निर्गुण और सगुण का पुराण और काव्य का भावावेग और अनासक्त चिन्तन का समन्वय रामचरितमानस के आदि से अन्त तक दो छोरो पर जानेवाली

परा कोटियो को मिलाने का प्रयत्न है। भावों की विविधता के साथ शैली की विविधता भी गास्वामीजी की विशेषता है। उनके काव्य म छप्पय पद्धति, गीति-पद्धति कवित्त सवया पद्धति सूक्ति-पद्धति, प्रबन्ध पद्धति आदि काव्यशैलियो का सफल प्रयोग हुआ है।

सकलित मुक्तक गीतावली' वैराग्य सदीपनी' जानकी मगल', कविता वली बरव रामायण' तथा 'दोहावली से उद्धृत किए गए हैं। 'गीतावली' के मुक्तक भावव्यजना तथा गयात्मकता की दृष्टि से उत्कृष्ट हैं। रामकथा के प्रसंगो मे सम्बन्धित ये मुक्तक जीवन की विविध भावदशाआ का मनोहर चित्र प्रस्तुत करत है। वराग्य सदीपनी के दाह सन्त स्वभाव तथा सन्त महिमा के वणन स सम्बन्धित है जो नैतिकता तथा शान्तरस की दृष्टि स पठनीय है। जानकी मगल' म से धनुर्भंग प्रसग के सरस मुक्तका का सकलन किया गया है, जिनमे जनक, सीता राम तथा अन्य राजाओ की मन स्थिति की व्यजना हुई है।

कवितावली कवित्त छन्द मे लिखी सरस मुक्तक रचना है। यहा 'राम वन गमन के उस ममस्पर्शी स्थल को लिया गया है जिसम ग्रामवासी राम सीता और लक्ष्मण को वन माग म जात हुए देखकर अपनी भोलीभाली प्रतिक्रियायें व्यक्त करते हैं। 'बरव रामायण से नाम महिमा का उजागर करने वाले कुछ दोहे सकलित है। 'दोहावली सरस मुक्तको का सकलन नही है सूक्ति भण्डार है। तुलसीदास ने इसमे लोकनीति एव लोकव्यवहार से सम्बन्धित विषयो पर मुक्तक लिखे हैं

3 रसखान

(1555–1618 ई०)

हिन्दी कृष्ण काव्य धारा मे रसखान का योगदान महत्त्वपूर्ण है। उनका काव्य धर्म और सम्प्रदाय की सीमा से परे होने के कारण भारतीय सस्कृति की भावना का सच्चा प्रतिनिधित्व करता है। मुसलमान होते हुए उन्होने कृष्ण के प्रति अनन्य अनुराग व्यक्त किया है जो धार्मिक समन्वय का उदाहरण है।

रसखान की रचनाए हैं—सुजान रसखान दानलीला प्रेमवाटिका तथा स्फुट पद। ये सभी रचनाए मुक्तक काव्य रूप है।

संग्रहीत की गयी है।

इस संकलन में प्रथम तीन रचनाओं से सामग्री संग्रहीत की गयी है। 'सुजान रसखान' का मुख्य विषय कृष्ण लीला का वर्णन है, जो स्फुट मुक्तकों में अभिव्यक्त हुआ है। कृष्ण लीला के अन्तर्गत प्रेम, भक्ति, गोचारण रासलीला, दधिदान उपालम्भ संयोग वियोग, कृष्ण सौन्दर्य उद्धव उपदेश आदि प्रसंगों का वर्णन है। दानलीला एक लघु रचना है, जिसमें 11 कवित्त सवैया संग्रहीत हैं।

यह रचना संयुक्त मुक्तक के अन्तर्गत रखी जा सकती है। इसकी प्रामाणिकता के सम्बन्ध में कुछ विद्वानों को संदेह है पर रीतिकाल के विशेषज्ञ डा विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने इसे प्रामाणिक मानकर 'रसखान ग्रन्थावली' में संग्रहीत किया है। दानलीला में गोपी कृष्ण या राधा कृष्ण के हासपरिहास का वर्णन है। रसखान के मुक्तक काव्य का तीसरा संकलन प्रेम वाटिका' है जिसमें 53 दोहे हैं। इसमें विशुद्ध प्रेम का निरूपण है। 'प्रेम वाटिका में प्रेम का स्वरूप, प्रेम की महिमा प्रेम पथ की कठिनता आदि बताते हुए प्रेम को ईश्वर का प्रतिरूप बताया गया है।

4 सुन्दरदास
(1596–1689 ई॰)

निर्गुण काव्य धारा के अन्तर्गत दादूदयाल के शिष्य सन्त सुन्दरदास बड़े प्रतिभाशाली कवि थे।

उन्होंने 42 ग्रन्थों की रचना की जिनमें ज्ञान समुद्र और सुन्दर विलास विशेष उल्लेखनीय है। उनके काव्य में भक्ति योग और नीति सम्बन्धी विषयों को स्थान मिला है। ये शृंगार रस की रचनाओं के कट्टर विरोधी थे। उन्होंने परिष्कृत ब्रज भाषा का प्रयोग किया है।

संकलित अंश में गुरु महिमा उपदेश काल की विकरालता देह एवं जगत् नश्वरता आशा तृष्णा आश्वासन, विश्वास देह की मलिनता, मूखता वाणी का महत्त्व व भजन न करने वाले, विषयों से सम्बन्धित मुक्तकों को स्थान दिया गया है।

5 पद्माकर
(1753–1833 ई०)

पद्माकर भट्ट रीतिकाल के अन्तिम चरण के यशस्वी कलाकार थे। अपने जीवन काल मे उन्हे ऊँचे स्तर का सम्मान प्राप्त था। देहावसान के उपरान्त तो उनका नाम और चमक उठा।

रचनाएं—पद्माकर की रचनाओ मे 1 हिम्मत बहादुर विरुदावली 2 जगद् विनोद 3 पद्माभरण, 4 रामरसायन (दोहे चौपाई म लिखित रामचरित) 5 प्रबोध पचासा एव 6 गगालहरी आदि प्रसिद्ध है।

काव्य सौष्ठव—मतिराम के रसराज के समान पद्माकर ने जगद विनोद ग्रन्थ लिखा। यह नायिका भेद का उत्कृष्ट उदाहरण ग्रन्थ है। 'ललित ललाम के समान पद्माभरण' नामक अलकार ग्रन्थ भी लिखा। पद्माकर ने वीररस का फडकता हुआ ग्रन्थ हिम्मत विरुदावली लिखा है। भूषण की टक्कर का वीररस का प्रवाह यहा भी दृष्टिगत होता है। शृगार रस के पदो मे पद्माकर की मधुर कल्पना और हाव भावपूर्ण मूर्तिविधान पाठको को प्रत्यक्ष अनुभूति कराने म समर्थ हैं। कल्पना और वाणी के साथ भावुकता का सयोग पद्माकर के काव्य म बहुधा मिलता है। उदयपुर के महाराणा भीमसिंह के दरबार मे रहते हुए पद्माकर ने 'गनगौर के मेले का ऐसा हृदयहारी वर्णन किया है जो अन्य कोई कवि आज तक नही कर पाया है।

ब्रजभाषा पर भी पद्माकर का असाधारण अधिकार था। अभिधा, लक्षणा एव व्यजना शक्ति के प्रयोग म भी इस कवि का समान कौशल दिखाई पडता है। कही तो इनकी भाषा स्निग्ध मधुर पदावली द्वारा एक सजीव भावमयी प्रेम-मूर्ति प्रस्तुत करती है और कही भाव या रस की धारा बहाती है, कही अनुप्रासों की झकार है तो कही वीररस भरी हुकार है। इनकी भाषा मे विषयानुकूल विविधता है परन्तु सर्वत्र सजीवता का गुण परिलक्षित होता है।

पद्माकर कवि अनुप्रास प्रिय लगते है। वर्णनात्मक पदो मे अनुप्रास का प्रयोग शृखलाबद्ध रूप मे दिखाई देता है। ऊहात्मकता का रूप कही भी नही मिलता है सर्वत्र हृदय की स्वाभाविकता प्रेरणा एव निष्कपटता मिलती है। बिंब-विधान की दृष्टि से भी पद्माकर को सफल कवि माना जा सकता है।

दक्षिण भारतीय पद्माकर ने जिस निष्ठा एव विश्वास से हिन्दी काव्य को गौरवान्वित किया है वह आज के दक्षिण भारतीय हिन्दी एव हिन्दी इतर लेखको

के लिए प्रेरणाप्रद हो सकता है। आज दक्षिण भारत के लोगो का पद्माकर का कवि रूप देखना चाहिए कि हिन्दी काव्य परम्परा सारे देश के लोगो की सम्पत्ति है। इसमे प्रदेश एव जाति भेद के लिए कोई अवकाश नही है।

सकलित अश मे पद्माकर के भक्ति, वीररस तथा गगा-स्तवन सम्बन्धी पद्यो को लिया गया है।

6 सूर्यमल्ल मिश्रण

(1815–1868 ई०)

राजस्थानी भाषा मे वीररस के अप्रतिम गायक सूर्यमल्ल मिश्रण का काव्य गुणात्मक एव विशिष्ट है।

सूर्यमल्ल मिश्रण ने निम्नलिखित ग्रन्थो की रचना की—वशभास्कर, वीर सतसई भगवतविलास, रामरजाट, छन्दोमयूख सती रासो फुटकल कवित, सवैये आदि तथा धातु रूपावली। इनमे वश भास्कर एक विशालकाय ग्रथ है जिसमे इतिहास और काव्य का सगम हुआ है। इसमे मुख्यतया बूँदी राज्य के इतिहास का वर्णन है साथ ही उसमे अनेक विषयो का समावेश भी हो गया है। यह ग्रथ अत्यन्त गूढ और क्लिष्ट है जिसका कारण विविध भाषाओ के अप्रचलित शब्दो का प्रयोग तथा कवि की पाण्डित्य प्रदर्शन की प्रवृत्ति है।

कविवर सूर्यमल्ल मिश्रण की अक्षय कीर्ति का आधार वीर सतसई है जिसके कुछ दोहे यहा सकलित हैं। वीर सतसई के प्रमुख विषय हैं—धरती प्रेम, प्रतिशोध की भावना मरणपर्व तथा राजस्थान मे प्रचलित विभिन्न रीति रिवाज। इस काव्य मे धरती के प्रति प्रेम की भावना का विशद् चित्रण किया है। जो व्यक्ति धरती को छीनने का प्रयास करता है उसके प्रति प्रतिशोध की भावना स्थान स्थान पर व्यक्त की गई है। य भावना राजपूतो के जातिगत स्वाभिमान से भी जुडी हुई है। स्वामिभक्ति राजपूतो के चरित्र की ऐसी विशेषता है जो उनमे अनुशासन की भावना भर देती है। कवि ने वीर सतसई मे इस भावना का स्वाभाविक चित्रण किया है। राजस्थान के वीरो की महिमा तथा कायरो की निन्दा कवि ने खुलकर की है। राजस्थान की वीर नारियो के चित्रण मे कवि ने अपने अद्भुत कौशल का परिचय दिया है। यह राजस्थानी वीर वीरागनाओ का ही स्वभाव था कि वे अपने पतियो को सहर्ष युद्ध भूमि मे विदा कर देती थी। युद्ध का

राजस्थानी वीर मरणपव की सज्ञा देते थे। इससे उनकी देशभक्ति तथा त्याग का परिचय मिलता है। सतसई मे कवि ने राजस्थान के रीति रिवाजा का वणन कर राजस्थान के परम्परागत परिवेश को उजागर किया है।

वीर सतसई' वीररस का काव्य है जिसमे ओजगुण की प्रमुखता होती है। कवि ने वीररस के अनुकूल ओजरूप के अनुरूप भाषा का प्रयोग किया है। कवि म भाषा की समाहार शक्ति विलक्षण है। वह छोटे से दोहे मे गम्भीर भावो को भरकर सामासिक शली मे अभिव्यक्त कर देता है। इस रचना म शैली की विविधता के कारण रोचकता निरन्तर बनी रहती है। कही सम्बोधन शैली है तो कही सम्वाद शैली, तो कही उद्बोधन शैली। सतसई की भाषा उत्तरकालीन राज स्थानी है।

7 शमशेर बहादुर सिंह
(जन्म 1911 ई०)

हिन्दी के नये कवियो मे शमशेर बहादुर सिंह की कविता खास अहमियत रखती है।

शमशेर की कृतिया इस प्रकार है—दूसरा सप्तक के सात कवियो मे से एक, कुछ कवितायें 1959 म कुछ और कवितायें, 1961 मे, चुका भी हूँ नही म 'उदिता 1980 (इसम कवि की प्रारम्भिक कवितायें है। इस रूप म प्रथम सकलन), 'इतने पास अपने, 1980 बात बोलेगी, 1981।

शमशेर सच्ची सवेदनाओ को बिम्बो के माध्यम से अभिव्यक्त करने की क्षमता मे बेजोड हैं। उनकी कवितायें सवेदनात्मक बिम्बों के सीधे चित्र प्रस्तुत करती हैं। लगता है कि कोई कवि चित्रकार अपने चित्रो म शब्दा की तूलिका से रग भर रहा है। उनकी कवितायें चित्र और कविता की मिली जुली स्थितिया का दस्तावेज है। शमशेर सीधे और सपाट चित्रो की अपेक्षा जीवन की विसगति या द्वद्वमयी स्थितियो के कवि बनकर आते हैं। इस दृष्टि से 'एक आदमी दो पहाडो को कुहनियो से ठेलता और घिर गया है समय का रथ जसी कवितायें उदाहरण के रूप मे ली जा सकती हैं।

शमशेर मे मार्क्सवादी चितन परम्परा का प्रभाव भी परिलक्षित होता है किन्तु उनका मार्क्सवाद कोरा चितन नही है। शमशेर मे व्यक्ति और समाज का

लेकर संघर्ष छिड़ा रहता है। वे व्यक्ति और समाज के बीच रास्ता खोजते हुए मानवतावादी बन जाते हैं।

समाजवादी संवेदनाओं के साथ साथ शमशेर में रोमानी संवेदनायें भी मिलती हैं। उनकी कविता में सौन्दर्य की प्यास प्रणयी की आकांक्षायें, प्रेमजनित आकांक्षा और निराशा से उपजी पीडायें आदि के चित्र मिलते हैं। प्रणय के प्रसंग में प्राकृतिक दृश्यों की रमणीयता के चित्र भी खींचे गये हैं। प्रेम की विभिन्न स्थितियों का चित्रण करने वाली कविताओं में बिम्ब योजना कुछ बिखर गई है किन्तु भावों की दृष्टि से अन्विति बनी रहती है। संक्षेप में कहा जा सकता है कि शमशेर मूलरूप से प्रणय जीवन के प्रसंगों के कवि हैं उनकी संवेदनाओं की पकड़ बड़ी मजबूत है। भाषा बड़ी सशक्त और तीखी है तथा अप्रस्तुत विधान के अन्तर्गत उपमायें जीवन से जुड़ी हुई हैं।

8 दुष्यन्त कुमार

हिन्दी में उर्दू की गजल शैली को लोकप्रिय बनाने का श्रेय दुष्यन्त कुमार का है। दुष्यन्त कुमार एक आस्थावादी संघर्ष, अनिश्चय, पीड़ा आदि उपस्थित होना स्वाभाविक है। संघर्ष जीवन की अनिवार्यता है किन्तु जीवन के प्रति आस्था और विश्वास लेकर आगे बढ़ा जा सकता है। आस्था वह संबल है जो व्यक्ति को संघर्षों में टूटने नहीं देता और उसके भीतर दृढ़ आत्मविश्वास बना रहता है। जीवन के प्रति इस दृष्टिकोण ने उनके काव्य में आशा का संदेश भर दिया है। उनकी मान्यता है कि सूर्योदय से पहले अन्धकार होता ही है—'मगर इससे भयभीत होने की जरूरत नहीं दिन निकलने से पहले ऐसा हुआ ही करता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि दुष्यन्त कुमार की मूलचेतना आस्था वादी है।

सन् 1933 में जन्मा यह प्रतिभा पुत्र यदि कुछ वर्ष और रह गया होता तो हिन्दी साहित्य को अधिक समृद्ध करता।

नई कविताओं के अच्छे कवियों में दुष्यन्त कुमार की गिनती की जाती है। उनके काव्य में अनुभूति की तीव्रता और अभिव्यक्ति की सुस्पष्टता समान रूप से मिलती है। उनकी गजलों का एकमात्र संकलन 'साये में धूप' प्रकाशित हुआ है।

इनकी प्रकाशित कृतियां हैं—सूय का स्वागत (कविता), आवाजा के घेरे (कविता) जलते हुए वन का वसन्त (कविता), एक कण्ठ विषपायी (काव्य नाटक), छोटे छोट सवाल (उपन्यास), आगन मे एक वृक्ष (उपन्यास), मन के कोण (एकाकी) और मसीहा मर गया (नाटक), कुछ आलोचनात्मक पुस्तकें।

विषम परिस्थितियो मे रहते हुए भी मौज मस्ती और आनन्द उल्लास के साथ जीवन व्यतीत करना दुष्यन्त की कविता का एक अन्य प्रतिपाद्य है। वे निराशा और मायूसी स थककर बैठ जाने मे विश्वास नही करते। पराजय के कारण उनमे सकोच और निराशा के भाव उत्पन्न नही होते। वे एक सकल्पशील की तरह कमक्षेत्र मे निरन्तर क्रियाशील रहते हैं। □

योगीन्दुदेव

देह विभिण्णउ णाणमउ जो परमप्पु णिएइ ।
परम-समाहि-परिट्ठियउ पंडिउ सो जि हवेइ ॥1॥

जासु ण कोहुण मोहु मउ जासु ण माय न माणु ।
जासु न ठाणु ण झाणु जिय सो जि णिरंजणु जाणु ॥2॥

देहे वसतु वि णवि छिवइ णियमे देहु जो जि ।
देह छिप्पई जो वि णवि मुणि परमप्पउ सो जि ॥3॥

जो सम-भाव परिट्ठियहँ जोइहँ कोई फुरेइ ।
परमाणंदु जणन्तु फुडु सो परमप्पु हवेइ ॥4॥

अत्थि न पुण्णु ण पाउ जसु अत्थिन हरिसु विसाउ ।
अत्थि न एक्कु वि दोसु जसु सो जि णिरंजणु भाउ॥5॥

जीवा जीव म एक्कु करि लक्खण भेएँ भेउ ।
जो परु सो परु भणमि मुणि अप्पा अप्पु अभेउ ॥6॥

देहहँ पेक्खिवि जर मरणु मा भउ जीव करेहि ।
जो अजरामरु बंभु परु सो अप्पाणु मुणेहि ॥7॥

अप्पु अप्पि मुणतु जिउ सम्मा दिट्ठि हवेइ ।
सम्मा इट्ठिउ जीवडउ लहु कम्मइँ मुच्चेई ॥8॥

हउँ गोरउ हउँ सामलउ हउँ जि विभिण्ण उवण्णु ।
हउँ तणु-अगउँ थूलु हउँ एहउँ मूढउ मण्णु ॥9॥

काल लहेविणु जोइया जिमु जिमु मोहु गलेइ ।
तिमु तिमु दसणु लहइ जिउ णियमं अप्पु मुणेइ ॥10॥

अप्पा णिय मणि णिम्मलउ णियमे वसइ ण जासु ।
सत्थ पुराणइँ तव चरणु मुक्खु वि करहिं कि तासु ॥11॥

गएँ रंगिए हिमवउए दउ ण भीसइ सतु ।
दप्पणि मइलए बिंबु जिम एहउ जाणि निभतु ॥12॥

देउ ण देउले णवि सिलए णवि लिप्पइ णवि चित्ति ।
अखउ णिरंजणु णाणमउ सिउ सठिउ मम चित्ति ॥13॥
जाणवि मण्णवि अप्पु परु जो पर-भाउ चएइ ।
सो णिवु सुद्धउ भावडउ णाणिहिं चरणु हवेइ ॥14॥
जावइ णाणिउ उपसमइ तामइ संजदु होइ ।
होइ कसायहँ वसि गयउ जीव असंजदु सो ॥15॥
णाण विहीणहँ मोक्ख पउ जीव म कासु विजोइ ।
बहुएँ सलिल विरोलियइँ करु चोप्पडउ ण होइ ॥16॥
भुजतु वि णिय कम्म फलु जो तहिं राउ ण जाइ ।
सो णवि बधइ कम्मु पुणु संचिउ जेण विलाइ ॥17॥
राय-दोसवे परिहरिवि जे मम जीव णियंति ।
ते सम भावि परिट्ठिया लहु णिव्वाणु लहंति ॥18॥
भल्लाहँ वि णासंति गुण जहँ संसग्ग खलेहिं ।
वइसाणरु लोहहँ मिलिउ तेँ पिट्टिपइ घणेहिं ॥19॥
जिण्णि वत्थि जेम बुहु देहु ण मण्णइ जिण्णु ।
देहिं जिण्णि णाणि तहँ अप्पु ण भण्ण जिण्णु ॥20॥
भिण्णउ वत्थु जि जेम जिय देहहँ भण्णइ णाणि ।
देहु वि भिण्णउँ णाणि तहँ अप्पहँ भण्णइ जाणि ॥21॥

☐ (परमात्म प्रकाश से)

ति-पयारो अप्पा मुणहिं परु अंतरु बहिरप्पु ।
पर जायहि अतर-सहिउ बाहिरु चयहि णिभतु ॥22॥
मिच्छा-दसण मोहियउ परु अप्पा न मुणेइ ।
सो बहिरप्पा जिण-भणिउ पुण संसार भमेइ ॥23॥
गिहि-वावार-परिट्ठिया हेयाहेउ मुणंति ।
अणुदिणु झायहिं देउ जिणु लहु णिव्वाणु लहंति ॥24॥
जह सलिलेण ण लिप्पियइ कमलणि पत्त कयानि ।
तह कम्मेहिं ण लिप्पियइ जइ रइ अप्प सहावि ॥25॥
राय रोस वे परिहरिवि जो समभाउ मुणेइ ।
सो सामाइउ जाणि फुडु केवलि एम भणेइ ॥26॥

(योगसार से)

तुलसीदास

(1)

रघुबर बाल छबि कहौं बरनि।
सकल सुखकी सींव कोटि मनोज सोभाहरनि ॥ 1 ॥
बसी मानहु चरन कमलनि अरुनता तजि तरनि।
रुचिर नूपुर किंकिनी मन हरति रुनझुन करनि ॥ 2 ॥
मंजु मेचक मृदुल तनु अनुहरति भूषन भरनि।
जनु सुभग सिंगारसिसु तरु फर्‌यो है अद्‌भुत फरनि ॥ 3 ॥
भुजनि भुजग सरोज नयननि, बदन बिधु जित्यो लरनि।
रहे कुहरनि, सलिल, नभ, उपमा अपर दुरि डरनि ॥ 4 ॥
लसत कर प्रतिबिम्ब मनि-आँगन घुटुरुवनि चरनि।
जनु जलज संपुट सुछबि भरि भरि धरति उर धरनि ॥ 5 ॥
पुन्यफल अनुभवति सुतहि बिलोकि दसरथ घरनि।
बसति तुलसी हृदय प्रभु किलकनि ललित लरखरनि ॥ 6 ॥

(2)

रंगभूमि आए दसरथ के किसोर हैं।
पेखना सो पेखन चले है पुर नर नारि,
बारे बूढ़े अंध-पंगु करत निहोर हैं ॥ 1 ॥
नील पीत नीरज कनक मरकत घन
दामिनि बरन तनु रूपके निचोर हैं।
सहज सलोने राम लषन ललित नाम
जसे सुने तसेई कुँवर सिरमौर हैं ॥ 2 ॥
चरन सरोज चारु जंघा जानु ऊरु कटि,
कंधर बिसाल, बाहु बडे बरजोर हैं।
नीकेकै निषंग कसे करकमलनि लस
बान बिसिषासन मनोहर कठोर हैं ॥ 3 ॥

काननि कनकफूल, उपबीत अनुकूल,
पियरे दुकूल बिलसत आछे छोर है।
राजिव नयन, बिधुबदन, टिपारे सिर
नख सिख अगनि ठगौरी ठौर ठौर हैं ॥ 4 ॥
सभा-सरवर लोक-कोकनद-कोकगन,
प्रमुदित मन देखि दिनमनि भोर हैं,
अबुध असैले मन मैले महिपाल भये,
कछुक उलूक कछु कुमुद चकोर है ॥ 5 ॥
भाईसा कहत बात, कौसिकहि सकुचात,
बोल घन घोर से बोलत थोर थोर है।
सनमुख सबहि, बिलोकत सबहि नीके
कृपासो हेरत हँसि तुलसीकी ग्रार हैं ॥ 6 ॥

(3)

दूलह राम, सीय दुलही री।
घन दामिन बर बरन, हरन मन सुदरता नखसिखनिबही, री ॥ 1 ॥
ब्याह बिभूपन-बसन बिभूषित, सखि अवलि लखि ठगि सी रही, री।
जीवन जनम लाहु, लोचन फल है इतनोइ लह्यो आजु सही री ॥ 2 ॥
सुखमा सुरभि सिंगार छीर दुहि मयन अमियमय कियो है दही,
मथि माखन सिय राम सँवारे, सकल भुवन छबि मनहु मही री ॥ 3 ॥
तुलसिदास जोरी देखत सुख सोभा अतुल न जाति कही री
रूप रासि बिरची बिरचि मनो सिलालवनि रति काम लही री ॥ 4 ॥

(4)

बिलोके दूरितें दोउ बीर।
उर आयत आजानु सुभग भुज, स्यामल-गौर सरीर ॥ 1 ॥
सीस जटा, सरसीरुह लोचन बने परिधन मुनिचीर।
निकट निषग, सग सिय सोभित करनि धुनत धनु-तीर ॥ 2 ॥
मन अगहुँड तनु पुलक सिथिल भयो नलिन-नयन भर नीर।
गडत गोड मानो सकुच पक महँ कढत प्रेम-बल धीर ॥ 3 ॥
बूझत चित्रकूट कहँ जेहि तहि, मुनि बालकनि बतायो।
तुलसी मनहुँ फनिक मनि ढूढत निरखि हरषि हिय धायो ॥ 4 ॥

(5)

तुम्हरे बिरह भई गति जौन ।
चित दै सुनहु राम करुनानिधि ! जानौं कछु पै सकौं कहि हौं न ।।
लोचन नीर कृपिनके धन ज्यों रहत निरंतर लोचनन कोन ।
हा' धुनि-खगी लाज पिंजरी महँ राखि हिये बड़े बधिक हठि मौन ।।
जेहि बाटिका बसति तहँ खग मृग तजि-तजि भजे पुरातन भौन ।
स्वास समीर भेंट भइ भोरेहु, तेहि मग पगु न धर्‌यो तिहुँ पौन ।।
तुलसिदास प्रभु ! दसा सीयकी मुख करि कहत होति अति गौन ।
दीजै दरस, दूरि कीजै दुख हो तुम्ह आरत-आरति-दौन ।। 4 ।।

(6)

हृदय घाउ मेरे पीर रघुबीरै ।
पाइ सजीवन जागि कहत यों प्रेमपुलकि बिसराय सरीर ।। 1 ।।
मोहि कहा बूझत पुनि पुनि जैसे पाठ-अरथ चरचा कीरै ।
सोभा सुख छति लाहु भूपकहँ, केवल कांति मोल हीरैं ।। 2 ।।
तुलसी सुनि सौमित्रि बचन सब धरि न सकत धीरौ धीर ।
उपमा राम लखन की प्रीतिकी क्यों दीजै खीर नीरैं ।। 3 ।।
(गीतावली से)

संत स्वभाव-वर्णन

दोहा

सरल बरन भाषा सरल सरल अर्थमय मानि ।
तुलसी सरस संतजन नाहि परी पहिचानि ।। 1 ।।
तुलसी ऐसे कहुँ कहूँ धन्य धरनि वह संत
परकाजे परमारथी प्रीति लिये निबहंत ।। 2 ।।
बोल बचन बिचारि कै लीन्हे संत सुभाव ।
तुलसी दुख दुवचन के पथ देत नहिं पाँव ।। 3 ।।
शत्रु न काहू करि गनै मित्र गनै नहि काहि ।
तुलसी यह मत संतको बोलै समता माहि ।। 4 ।।
मुख दीखत पातक हरै परसत कर्म बिलाहिं ।
बचन सुनत मन मोहगत, पुरुब भाग मिलाहिं ।। 5 ।।

सीतल बानी संत की, ससिहू ते अनुमान।
तुलसी कोटि तपन हरै जो कोउ धारै कान ॥ 6 ॥
कोमल बानी संत की, स्रवत अमृतमय आइ।
तुलसी ताहि कठोर मन सुनत मैन होइ जाइ ॥ 7 ॥
अति कोमल अरु बिमल रुचि मानस में मल नाहिं।
तुलसी रत मन होइ रहै, अपने साहिब माहिं ॥ 8 ॥
जाके मन ते उठि गई तिल तिल तृष्ना चाहि।
मनसा बाचा कमना, तुलसी बंदत ताहि ॥ 9 ॥
कंचन काँचहि सम गनै कामिनि काष्ठ पषान।
तुलसी ऐसे संतजन, पृथ्वी ब्रह्म समान ॥ 10 ॥

संत-महिमा वर्णन

को बरनै मुख एक तुलसी महिमा संत की।
जिन्ह कें बिमल बिबेक सेस महेस न कहि सकत ॥ 11 ॥
धन्य धन्य माता पिता धन्य पुत्र बर सोइ।
तुलसी जो रामहिं भजे, जसेहु कैसेहु होइ ॥ 12 ॥
महि पत्री करि सिंधु मसि, तरु लेखनी बनाइ।
तुलसी गनपति सो तदपि, महिमा लिखी न जाइ ॥ 13 ॥
तुलसी जाके बदन ते धोखेहु निकसत राम।
ताके पग की पगतरी, मेरे तन को चाम ॥ 14 ॥
अति ऊँचे भूधरनि पर भुजगन के अस्थान।
तुलसी अति नीचे सुखद, ऊख अन्न अरु पान ॥ 15 ॥
तुलसी भगत सुपच भलौ भजै रैन दिन राम।
ऊँचो कुल केहि काम को, जहाँ न हरि को नाम ॥ 16 ॥
('वैराग्य-संदीपनी' से)

धनुभङ्ग

देखि सपुर परिवार जनक हिय हारेउ।
नृप समाज जनु तुहिन बनज बन मारेउ ॥ 1 ॥
कौसिक जनकहि कहेउ देहु अनुसासन।
देखि भानु कुल भानु इसानु सरासन ॥ 2 ॥

मुनिवर तुम्हरें वचन मेरु महि डोलहिं।
तदपि उचित आचरत पाँच भल बोलहिं॥ 3 ॥
बानु बानु जिमि गयउ गवहिं दसकंधरु।
को अवनी तल इन सम बीर धुरंधरु॥ 4 ॥
सब मल बिछोहनि जानि मूरति जनक कौतुक देखहू।
धनु सिंधु नप बल जल बढ़यो रघुबरहि कुंभज लेखहू॥ 5 ॥
सुनि सकुचि सोचहिं जनक गुर पद बंदि रघुनंदन चले।
नहिं हरप हृदय बिपाद कछु भए सगुन सुभ मंगल भले॥ 6 ॥
बरिसन लगे सुमन सुर दुंदुभि बाजहिं।
मुदित जनक पुर परिजन नृपगन लाजहिं॥ 7 ॥
महि महिधरनि लखन कह बलहिं बढावनु।
राम चहत सिव चापहिं चपरि चढावनु॥ 8 ॥
गए सुभायँ राम जब चाप समीपहिं।
सोच सहित परिवार बिदेह महीपहिं॥ 9 ॥
कहि न सकति कछु सकुचति सिय हियँ सोचइ।
गौरि गनेस गिरीसहि सुमिरि सकोचइ॥ 10 ॥
प्रेम परखि रघुबीर सरासन भजेइ।
जनु मृगराज किसोर महागज भजेइ॥ 11 ॥
गजेउ सो गजेंउ घोर धुनि सुनि भूमि भूधर लरखरे।
रघुबीर जस मुकता बिपुल सब भुवन पटु पेटक भरे॥ 12 ॥
हित मुदित अनहित रुदित मुख छबि कहत कबि धनु जाग की।
जनु भोर चक्क चकोर कैरव सघन कमल तड़ाग की॥ 13 ॥
प्रभुहि माल पहिराइ जानकिहि लै चली।
सखी मनहुँ बिधु उदय मुदित कैरव कली॥ 14 ॥
बरषहिं बिबुध प्रसून हरषि कहि जय जए।
सुख सनेह भरे भुवन राम गुर पहँ गए॥ 15 ॥
('जानकी मंगल' से)

कामु से रूप प्रताप दिनेसु से सोमु से सील गनेसु से माने ।
हरिचंदु से साचे बडे बिधि से मघवा से महीप, बिषै सुख साने ।।
सुक से मुनि, सारद से बक्ता, चिरजीवन लोमस ते अधिकाने ।
ऐस भए तौ कहा 'तुलसी', जो पै राजिवलोचन रामु न जाने ।।1।।

रानी मैं जानी अयानी महा पवि पाहनहू तें कठोर हियो है ।
राजहुँ काजु अकाजु न जान्यो, कह्यो तियको जेहिं कान कियो है।।
ऐसी मनोहर मूरति ए, बिछुरें कसे प्रीतम लोगु जियो है ।
आखिनमे सखि ! राखिबे जोगु इन्हे किमि कै बनबासु दियो है ।।2।।

सीस जटा उर बाहु बिसाल बिलोचन लाल तिरछी सी भौहैं ।
तून सरासन बान धरें तुलसी बन मारगमे सुठि सोहैं ।।
सादर बारहिं बार सुभायँ चितै तुम्ह त्यों हमरा मनु मोहैं ।
पूँछति ग्रामबधू सिय सो कहौ सावरे से सखि रावरे को हैं ।।3।।

सुनि सुंदर बैन सुधारस साने सयानी है जानकी जानी भली ।
तिरछे करि नैन दै सैन तिन्हैं समुझाइ कछू मुसुकाइ चली ।।
तुलसी तेहि औसर सोहैं सबैं अवलोकति लोचनलाहु अली ।
अनुराग तडाग मे भानु उदै बिगसी मनो मंजुल कंजकली ।।4।।

धीर धीर कहैं चलु दखिअ जाइ जहा सजनी ! रजनी रहिहैं ।
कहिहै जगु पोच न सोचु कछू फलु लोचन आपन तौ लहिहैं ।।
सुखु पाइहैं कान सुनें बतिया कल आपुनमे कछु प कहिहैं ।
तुलसी अति प्रेम लगी पलकै, पुलकी लखि रामु हिय महि हैं ।।5।।

सावरे गोरे सलोने सुभायँ मनोहरतां जिति मैनु लियो है ।
बान कमान, निषग कसे सिर सोहैं जटा, मुनिबेषु कियो है ।।
सग लिएँ बिधुबैनी बधू रतिको जेहि रचक रुपु दियो है ।
पायन तौं पनही न पयादेंहि क्यो चलिहैं सकुचात हियो है ।।6।।

बनिता बनी स्यामल गौरके बीच,
बिलोकहु, री सखि ! मोहि सी ह्वै ।
मगजोगु न कोमल, क्यों चलिहै
सकुचाति मही पनपकज छ्वै ।।

तुलसी मुनि ग्रामवधू विथकीं,
पुलकी तन औ चले लोचन च्वै।
सब भाँति मनोहर मोहनरूप,
अनूप हैं भूपके बालक द्वै॥ 7॥

('कवितावली' से)

चित्रकूट पय तीर सो सुरतरु बास।
लखन राम सिय सुमिरहु तुलसीदास॥ 1॥
तप तीरथ मख दान नेम उपवास।
सब ते अधिक राम जपु तुलसीदास॥ 2॥
मात बाप गुर स्वामि राम कर नाम।
तुलसी जेहि न सोहाइ ताहि बिधि बाम॥ 3॥
जान आदि कवि तुलसी नाम प्रभाउ।
उलटा जपत कोल ते भए रिषि राउ॥ 4॥
महिमा राम नाम कै जान महेस।
देत परम पद कासी करि उपदेस॥ 5॥
कलसजोनि जियँ जानेउ नाम प्रतापु।
कौतुक सागर सोखेउ करि जिय जापु॥ 6॥
तुलसी सुमिरत राम सुलभ फल चारि।
बेद पुरान पुकारत कहत पुरारि॥ 7॥
दोष दुरित दुख दारिद दाहक नाम।
सकल सुमंगल दायक तुलसी राम॥ 8॥
केहि गिनती महँ गिनती जस बन घास।
राम जपत भए तुलसी तुलसीदास॥ 9॥
कामधेनु हरि नाम कामतरु राम।
तुलसी सुलभ चारि फल सुमिरत नाम॥ 10॥

(बरवै रामायण से)

ग्यान कहै अग्यान बिनु तम बिनु कहै प्रकास।
निरगुन कहै जो सगुन बिनु सो गुरु तुलसीदास॥ 1॥

ग्यानी तापस सूर कवि कोविद गुन आगार।
केहि कै लोभ विडंबना कीन्हि न एहिं संसार ॥ 2 ॥
मान राखिबो माँगिबो पिय सों नित नव नेहु।
तुलसी तीनिउ तब फबैं जौ चातक मत लेहु ॥ 3 ॥
तुलसी चातक माँगनो एक एक घन दानि।
देत जो भू भाजन भरत लेत जो घूंटक पानी ॥ 4 ॥
नहिं जाचत नहिं संग्रही सीस नाइ नहिं लेइ।
ऐसे मानी मागनेहि को वारिद बिन देइ ॥ 5 ॥
सुजन सुतरु बन ऊख सम खल टंकिका रुखान।
परहित अनहित लागि सब साँसति सहत समान ॥ 6 ॥
पिअहिं सुमन रस अलि बिटप काटि कोल फल खात।
तुलसी तरुजीवी जुगल सुमति कुमति की बात ॥ 7 ॥
अवसर कौडी जो चुकै बहुरि दिएँ का लाख
दुइज न चदा देखिऐ उदौ कहा भरि पाख ॥ 8 ॥
उत्तम मध्यम नीच गति पाहन सिकता पानि।
प्रीति परिच्छा तिहुन की बैर बितिक्रम जानि ॥ 9 ॥
पुन्य प्रीति पति प्रापतिउ परमारथ पथ पाँच।
लहहिं सुजन परिहरहिं खल सुनहु सिखावन साच ॥ 10 ॥
नीच निरादरहीं सुखद आदर सुखद बिसाल।
कदरी बदरी बिटप गति पेखहु पनस रसाल ॥ 11 ॥
बसि कुसग चह सुजनता ताकी आस निरास।
तीरथहू को नाम भो गया मगह के पास ॥ 12 ॥
राम कृपा तुलसी सुलभ गग सुसग समान।
जो जल परै जो जन मिलै कीजै आपु समान ॥ 13 ॥
जड चेतन गुन दोष मय बिस्व कीन्ह करतार।
सत हस गुन गहहिं पय परिहरि बारि बिकार ॥ 14 ॥
भलो कहहिं बिनु जानेहूँ बिनु जानें अपबाद।
ते नर गादुर जानि जियँ करिय न हरष बिषाद ॥ 15 ॥
पर सुख संपति देखि सुनि जरहिं जे जड बिनु आगि।
तुलसी तिन के भागते चलै भलाई भागि ॥ 16 ॥

दस मास धरता करम बचन विचार विहीन ।
ते सुरतरु तर दारिदी सुरसरि तीर मलीन ॥ 17 ॥

बोल न मोटे मारिये मोटी रोटी मारु ।
जीति सहस सम हारिबो जीतें हारि निहारु ॥ 18 ॥

रोष न रसना खोलिए बरु खोलिअ तरवारि ।
सुनत मधुर परिनाम हित बोलिअ बचन बिचारि ॥ 19 ॥

मधुर बचन कटु बोलिबो बिनु श्रम भाग अभाग ।
कुहू कुहू कलकंठ रव का का कररत काग ॥ 20 ॥

सिंधु तरन कपि गिरि हरन काज साईं हित दोउ ।
तुलसी समयहि सब बडो बूझत कहुँ काउ कोउ ॥ 21 ॥

तुलसी असमयके सखा धीरज धरम बिबेक ।
साहित साहस सत्यव्रत राम भरोसो एक ॥ 22 ॥

दीरघ रोगी दारिदी कटुबच लोलुप लोग ।
तुलसी प्रान समान तउ होहिं निरादर जोग ॥ 23 ॥

पाही खेती लगन बट रिन कुब्याज मग खेत ।
बैर बडे सो आपने किए पाच दुख हेत ॥ 24 ॥

रीझि आपनी बूझि पर खीझि विचार विहीन ।
ते उपदेस न मानही मोह महोदधि मीन ॥ 25 ॥

बरपत हरपत लोग सब करपत लखे न कोइ ।
तुलसी प्रजा सुभाग ते भूप भानु सो होइ ॥ 26 ॥

(दोहावली से)

रसखान

भक्ति

मानुप हौं तो वही रसखान बसौं ब्रज गोकुल गाँव के ग्वारन ।
जो पशु हौं तो कहा बस मेरो चरौं नित नंद की धेनु मँझारन ।
पाहन हौं तो वही गिरि को जो धर्यो कर छत्र पुरंदर धारन ।
जौ खग हौं तो बसेरो करौं मिलि कालिंदी कूल कदंब की डारन ॥ 1 ॥

जो रसना रस ना बिलसै तेहि देहु सदा निज नाम उचारन ।
मो कर नीकी करैं करनी जु पै कुंज कुटीरन देहु बुहारन ।
सिद्धि समृद्धि सबै रसखानि लहौं ब्रज रेनुका-अंग सँवारन ।
खास निवास मिलै जु पै तो वही कालिंदी कूल कदंब की डारन ॥ 2 ॥

या लकुटी अरु कामरिया पर राज तिहूँ पुर को तजि डारौं ।
आठहु सिद्धि नवौ निधि को सुख नंद की गाइ चराइ बिसारौं ।
ए रसखानि जबै इन नैनन तें ब्रज के बन बाग तड़ाग निहारौं ।
कोटिक हूँ कलधौत के धाम करील के कुंजन ऊपर वारौं ॥ 3 ॥

बैन वही उनको गुन गाइ औ कान वही उन बैन सों सानी ।
हाथ वही उन गात सरैं अरु पाइ वही जु वही अनुजानी ।
जान वही उन प्रान के संग और मान वही जु करै मनमानी ।
त्यों रसखानि वही रसखानि जु है रसखानि सों है रसखानि ॥ 4 ॥

सेस सुरेस दिनेस गनेस प्रजेस धनेस महेस मनावौ ।
कोऊ भवानी भजौ मन की सब आस सबै बिधि जाइ पुरावौ ।
कोऊ रमा भजि लेहु महाधन, कोऊ कहूँ मनबांछित पावौ ।
पै रसखानि वही मेरो साधन और त्रिलोक रहौ कि नसावौ ॥ 5 ॥

गुंज गरें सिर मोरपखा अरु चाल गयंद की मो मन भावै ।
साँवरो नंदकुमार सबै ब्रजमंडली में ब्रजराज कहावै ॥
साज समाज सबै सिरताज और छाज की बात नहीं कहि आवै ।
ताहि अहीर की छोहरियाँ छछिया भरि छाछ पै नाच नचावै ॥ 6 ॥

संपति सौं सकुचाइ कुबेरहिं रूप सौं दीनी चिनौती अनंगहि।
भोग कै कै ललचाइ पुरंदर जोग कै गंग लई धरि मंगहि।
ऐसे भये तौ कहा रसखानि रसै रसना जौ जु मुक्ति-तरंगहि।
दै चित ताके न रंग रच्यौ जु रह्यौ रचि राधिका रानी के रंगहि ॥ 7 ॥

वन-लीला

गोरस गाँव ही मैं बिचिबो नहीं नंद मुखानल झारन।
भैल गह चलिये रसखानि तो पाप बिना डरियै किहि कारन।
नाहिं री ना भटू क्या करि कै बन पैठन पाइबी लाज सम्हारन।
कुंजनि नंदकुमार बसै तहाँ मार बसै कचनार की डारन ॥ 8 ॥

गोरस-लीला

बारही गोरस बेंचि री आजु तू माइ के मूड़ चढ़ै मत मौंडी।
आवत जात ही ह्वैगी साँझ भटू जमुना मतरौड लौं औंडी।
पार गएँ रसखानि कहै अँखियाँ कहूँ होहिंगी प्रेम कनौडी।
राधे बलाइ ल्यौ जाइगी बाज अबै ब्रजराज सनेह की डौंडी ॥ 9 ॥

दान-लीला

छीर जौ चाहत चीर गहैं एजू लेउ न केतिक छीर अचैहौ।
चाखन के मिस माखन माँगत खाउ न माखन केतिक खैहौ।
जानति हौं जिय की रसखानि सु काहे कौं एतिक बात बढ़ैहौ।
गोरस के मिस जो रस चाहत सो रस कान्हजू नेकु न पैहौ ॥ 10 ॥

दधिदान

एक तें एक लौं कानन मैं रहैं ढीठ सखा सब लीने कन्हाई।
आवत ही हौं लौं कहौ कौन कसे सहै अति की अधिकाई।
खायौ दही मेरो भाजन फारयौ न छोडत चीर दिवाएँ दुहाई।
सौंह जसोमति की रसखानि तें भागें मरू करि छूटन पाई ॥ 11 ॥

उलाहना

काहू को माखन चाखि गयौ अरु काहू को दूध दही ढरकायौ।
काहू को चीर लै रूख चढ़्यौ अरु काहू को गुंजछरा छहरायौ।
मानै नहीं बरजें रसखानि सु जानिये राज इहै घर आयौ।
आव री बूझ जसोमति सौं यह छोहरा जायौ कि मेव मँगायौ ॥ 12 ॥

ग्वालिन द्वैक भुजान गहैं रसखानि को लाई जसोमति पाहैं।
लूटत हैं कहै ये बन मे मन मैं कहैं ये सुख लूट कहाँ हैं।
अग ही अग ज्यों ज्यों ही लगैं त्यौं त्यौं ही न अग ही अग समाहै।
कै पछलैं उलटैं पग एक तौ वे पछलैं उलटैं पग जाहै॥ 13 ॥

सपत्नी-भाव

काह कहूँ सजनी सग की रजनी नित बीतैं मुकुद को हेरी।
ग्रावन रोज कहैं मनभावन आवन की न कबौं करी फेरी।
सौतिन भाग बढ्यौ ब्रज मे जिन लूटत हैं निसि रँग घनेरी।
मो रसखानि लिखी बिधना मन मारि कैं आपु बनी हौं अहेरी॥ 14 ॥

मिलन

बक बिलोकनि हँसनि मुरि, मधुर बन रसखानि।
मिले रसिक रसराज दोऊ हरखि हिये रसखानि॥ 15 ॥
एक मम इक ग्वालिनि को ब्रजजीवन खेलत दृष्टि परयौ है।
बाल प्रबीन सक करि क सरवाइ कै मोरन चीर धरयौ है।
यौं रस ही रस ही रसखानि सखी अपनो मनभायो करयो है।
नन्द के लाडिले ढाकि दै सीस हहा हमरो बर हाथ भरयौ है॥ 16 ॥

वियोग

काह कहूँ रतिया की कथा बतियाँ कहि आवत है न कछू री।
आई गोपाल लियो भरि अक कियो मनभायो पियो रस कू री।
ताही दिना सो गडी अखियाँ रसखानि मेरे अग अग म पूरी।
पै न दिखाई पर अब बावरी द कै वियोग बिथा की मजूरी॥ 17 ॥

प्रिय को रिझाना

देखिहौ आँखिन सो पिय को अरु कानन सा उन बैन को प्यारी।
बाँके अनगनि रगनि की सुरभीनि सुगन्धनि नाक म डारी।
त्यौं रसखानि हिये म धरो वहि साँवरो मूरति मन उजारी।
गाव भरो काउ नाव धरो पुनि साँवरी हौं बनिहौं सुकुमारी॥ 18 ॥

मानिनी

जो कबहू मग पाँव न देन सु तो हित लालन आपुन गौनै।
मेरो कह्यौ करि मौन तजो कहि मोहन सों बलि बोल सलौनै।
सौहैं दिवावत हौ रसखानि तू सौहैं कर बिन लाखनि लौनै।
अनोखी तू मानिनि मान करयो बिन मान बसत म कीनो है कौनै॥ 19 ॥

क्रियाविदग्धा

खेलै अलीजन के गन में उत प्रीतम प्यारे सो नेह नवीनो।
बैननि बोध करै इत को, उत सननि मोहन को मन लीनो।
नैननि की चलिबो कछु जानि सखी रसखानि चितवे कौं कीनो।
जा लखि पाइ जँभाइ गई चुटकी चटकाइ बिना कर दीनो ॥ 20 ॥

बंशी

जल की न घट भरैं मग की न पग धरैं
घर की न कछु करैं बैठी भर साँसु री।
एकैं सुनि लोट गई एकैं ल ोट पोट भई
एकनि के दगनि निकसि आए आँसु री।
कहै रसखानि सो सबै ब्रज बनिता वधि
बधिक कहाय हाय भई कुलहाँसुरी ।
करियै उपाय बाँस डारियै कटाय
नाहिं उपजगो बाँस नाहिं बाजै फेरि बाँसुरी ॥ 21 ॥

कालिह परयो मुरली धुनि में रसखानि जू कानन नाम हमारो।
ता दिन तें न धीर रह्यो जग जानि लयो अति कीनो पँवारो।
गाँवन गाँवन में अब तो बदनाम भई सब सो क किनारो।
तो सजनी फिरि फेरि कहौं पिय मेरो वही जग ठोंकि नगारो ॥ 2? ॥

ब्रज की बनिता सब घेरि कहैं तेरो ढारो बिगारो कहा कस री।
अरी तू हमको जमकाल भई नेक कान्ह गही तो कहा रस री।
रसखानि भली विधि आनि बनी बसिबो नहिं देत दिना दस री।
हम तो ब्रज को बसिबोई तजो बम री ब्रज बरिन तू बँसरी ॥ 23 ॥

चन्द सो आनन मैन मनोहर बन मनोहर मोहत है मन।
बक बिलोकनि लोट भई रसखानि हियो हित दाहत न तन।
मैं तब तें कुलकानि की मैंड नखी जु सखी अब डोलत हौं बन।
बेनु बजावत आवत है नित मेरी गली ब्रजराज को मोहन ॥ 24 ॥

बेनु बजावत गोधन गावत ग्वालन मग गली मधि आयो।
बाँसुरी में उनि मेरोई नाँव सुग्वालिनि के मिस टेरि सुनायो।
ए सजनी सुनि सास के त्रासनि नद के पास उसास न मायो।
कैसी करौं रसखानि नहीं हित चैन नहीं चितचोर चुरायो ॥ 25 ॥

मोहन की मुरली सुनि कै वह बौरी ह्वै आनि अटा चढ़ि झाँकी।
गोप बड़ेन की डीठि बचाइ कै डीठि सो डीठि मिली दुहुँ घाँ की।
देखत मोल भयो अँखियान को को करै लाज कुटुम्ब पिता की।
कैसें छुटाई छुटै अँटकी रसखानि दुहू की बिलोकन बाँकी ॥ 26 ॥

होली

खेलत फाग सुहाग भरी अनुरागहिं लालन को धरि कै।
मारत कुंकुम केसरि के पिचकारिन मैं रँग को भरि कै।
गेरत लाल गुलाल लली मन मोहनि मौज मिटा करि कै।
जात चली रसखानि अली मदमत्त मनी मन को हरि कै ॥ 27 ॥

फागुन लाग्यो सखी जब तें तब तें ब्रजमंडल धूम मच्यो है।
नारि नवेली बचै नहिं एक बिसेख यहै सब प्रेम अँच्यो है।
साँझ सकारे वही रसखानि सुरंग गुलाल लै खेल रच्यो है।
को सजनी निजली न भई अरु कौन भटू जिहिं मान बच्यो है ॥ 28 ॥

आजु न कोऊ सखी जमुना जल रोकें खड़ो मग नंद को लाला।
नैन नचाइ चलाइ चितै रसखानि चलावत प्रेम को भाला।
मैं जु गई हुती बैरन बाहर मेरी करी गति टूटि गो माला।
होरी भई कै हरी भए लाल कै लाल गुलाल पगी ब्रजबाला ॥ 29 ॥

भ्रमरगीत

जोग सिखावत आवत है वह, कौन कहावत को है कहाँ को।
जानति हैं बर नागर है पर नेकहु भेद लह्यौ नहिं ह्याँ को।
जानति ना हम और कछू मुख देखि जियें नित नंदलला को।
जात नहीं रसखानि हमें तजि, राखनहारो है मोरपखा को ॥ 30 ॥

लाज के लेप चढ़ाइ कै अंग पची सब सीख को मंत्र सुनाइ कै।
गारुड़ ह्वै ब्रज लोग थक्यो करि औषद बेसक सौंह दिवाइ कै।
ऊधौ सौ को रसखानि कहै जिन चित्त धरौ तुम एते उपाइ कै।
कारे बिसारे को चाहैं उतारयो अरे विष बावरे राख लगाइ कै ॥31 ॥

वा रसखानि गुनौं सुनिकें हियरा सत टूक ह्वै फाटि गयो है।
जानति हैं न कछू हम ह्याँ उन वाँ पढ़ि मंत्र कहा धौं दयो है।
साँची रहैं जिय मैं निज जानि कै जानति हैं जस जैसो लयो है।
लोग लुगाइ सबै ब्रज माँहि कहैं हरि चेरी को चेरा भयो है ॥ 32 ॥

जाने कहा हम मूढ सबै समुझी न तबै जबही बपनि आई।
सोचति हैं मन ही मन री अब कीजै कहा बतियां जु गँवाई।
नीचो भयौ ब्रज को सब सीस मलीन भई रसखानि दुहाई।
चेरी को चेटक देखहु री हरि चेरो कियौ धौ कहा पढि माई॥ 33 ॥

भेती जु पै कुबरी ह्यां सखी भरी लातन मूका बकोटतो लेती।
लेति निकारि हिये की सबै, नक छेदि कै कौडी पिराइ कै देती।
देती नचाइ कै नाच वा रांड को, लाल रिझावन को फल सेती।
सेती सदौ रसखानि लियें कुबरी के करेजनि सूल सी भेती॥ 34 ॥

('सुजान-रसखान' से)

2 दान लीला

श्रीकृष्ण—

एरी कहा बृषभानपुरा की तो दान दियें बिन जान न पैहौ।
औ दधिमाखन देव जु चाखन झूमत लाखन या मग ऐहौ।
नाहिं तो जो रस सो रस लै हो जु गोरस बेचन फेरि न जैहौ।
नाहक नारि तू रारि बढावति गारि दियें फिरि आपहिं दैहौ। 35।

श्रीराधिका—

गारी के देवैया बनवारी तुम कहाँ कौन
हम तो बृषभान की कुमारी सब जानो है।
जोर तो करोगे जाइ जासों हग पाइ आई
मुरही तें आजु मो सो कैसो हठ ठानो है।
बूझि देखौ मन माँहि अरुझत मग जात
बूझिहौ निदान काहू जौन कहो मानो है।
मेरे जान कोऊ मीरखान आय दही छीन
तू तो है अहीर मोहिं नाहि पहिचानो है। 36।

श्रीकृष्ण—

एरी तोहू पहचानों बृषभान हूँ को जानो नेकु
काहू की न सका मानों हौ अहीर ऐसो हौं।
मीरन को मारि मान तोरिहौ गुमान लेहौं
आज तोसों दान लेहौं देखिये जु जैसो हौं।

फोरिहौ मटूकी माट लै दही करौगी लूट,
जैहौ कौने सु तौ घाट बाट रोकें बसो हौ।
कह्या कहौ राधे तोंहि अजहूँ न चीन्हे मोंहि
मेरी ओर देखि नेकु दानी कान्ह कैसा हौ। 37।

श्रीराधिका—

जोहौ तिहारी ओर नन्दगाव के किसोर
माखन के चोर तुम गोकुला के बासी हौ,
जसुदा तिहारी माइ ऊखल सौं बांधौ जाइ,
दानी प कहाए आइ भए कामरासी हौ।
कंस सो कहौगी जाइ माँगिहो तुमै धराइ
रहौगे कहाँ छिपाइ जौ बडे मवासी हौ।
गोरस को दान हम अजहूँ न सुने कान
काहे लाल हम सो करत रोज हासी हौ। 38।

श्रीकृष्ण—

दान प न कान सुन लेहौ सो गुमान भजि,
हासी पर हासी परहासी आज करौंगा।
जेती तुम ग्वालिन तितेक सब रोकि राखौ
जमुना की ओटि मे जु सबै काम सरौंगा।
जाको तू कहति कंस ताहि को करौं विध्वंस,
हौ तौ जदुबंस बीर काहू सो न डरौंगो।
भूषन उतारि चीर फारि चीर डारि दही,
नन्द की दुहाई खात टेक सो न टरौंगो। 39।

श्रीराधिका—

नन्द की न दासी हम जातिहू मे नाही कम,
एक गाव बसौ स्याम भोर भए वादी हो।
जमुना के तीर तुम चीर हू चुराइ रहो
ताहू की न लाज आई ओर के फसादी हो।
रोकत हो टोकत हो बाट माहि साट खाह,
माट फोरि चाटौ दही यही गुन आदी हो।
जो कहूँ बैठारिहो न पारिहो रुआब माहि,
नोन की न गोन लीहै आदी हू न लादी हा। 40।

श्रीकृष्ण—

मेरो को कर नियाव हौं तो तीनि लोक राव,
हमैं घेरो याही चाव दाव भलो पायो है।
बिंदावन बृज माह कदम की छाह चलो
अंक भरि भेटि लैहौ जमो मन भायो है।
हीरा मनि मानिक की काच और पातिन की
मालिन की गात की अगात ही लगायो है।
गोरस तो ढेर ढेर खाहु पीवो बेर बर
दखहु सलोना रूप दानी काहू आयो है। 41।

श्रीराधिका—

नौ लख गाय सुनी हम नन्द के तापर दूध दही न अघाने।
मागत भीख फिरौ बन ही बन झूठि ही बातन के मन माने।
और की नारिन के मुख जोवत लाज गहौ कछु होहु सयाने।
जाहु भले जु भले घर जाहु चले बस जाहु बिंदावन जाने। 42।
('दान लीला' से)

3 प्रेम

प्रेम अयनि श्रीराधिका प्रेम बरन नन्दनन्द।
प्रेमबाटिका के दोऊ माली मालिन द्वन्द ॥1॥
प्रेम प्रेम सब कोउ कहत, प्रेम न जानत कोइ।
जो जन जान प्रेम तो, मर जगत क्यों रोइ ॥2॥
प्रेम अगम अनुपम अमित सागर-सरिस बखान।
जो आवत यदि ढिग बहुरि जात नाहिं रसखान ॥3॥
प्रेम-बारुनी छानि कै, बरुन भए जलधीस।
प्रेमहि तें विषपान करि पूजे जात गिरीस ॥4॥
प्रेम रूप दरपन अहा रचै अजूबो खेल।
या मे अपनो रूप कछु लखि परिहै अनमेल ॥5॥
कमल तंतु सो छीन अरु कठिन खड़ग की धार।
अति सूधो टढ़ो बहुरि प्रेमपंथ अनिवार ॥6॥
लोक वेद मरजाद सब लाज काज सन्देह।
देत बहाए प्रेम करि विधि निषेध को नेह ॥7॥

कबहूँ न जा पथ भ्रम तिमिर रहै सदा सुख चद ।
दिन दिन बाढत ही रहत होत कबहूँ नहिं मद ॥8॥

भलें वृथा करि पचि मरौ ज्ञान गरूर बढाय ।
बिना प्रेम फीको सबै कोटिन कियें उपाय ॥9॥

स्रुति पुरान आगम स्मृतिहि प्रेम सबहि को सार ।
प्रेम बिना नहिं उपज हिय पेम बीज अँकुवार ॥1(॥

आनँद अनुभव होत नहिं बिना प्रेम जग जान ।
क वह विषयानन्द क ब्रह्मानन्द बखान ॥11॥

ज्ञान कम रु उपासना, सब अहमिति को मूल ।
दृढ निश्चय नहिं होत बिन किय प्रेम अनुकूल ॥12॥

सास्त्रन पढि पडित भए कै मौलवी कुरान ।
जु प प्रेम जान्यो नही कहा कियौ रसखान ॥13॥

काम क्रोध मद मोह भय लोभ द्रोह मात्सय ।
इन सब ही तें प्रेम है परे कहत मुनिवय ॥14॥

बिन गुन जोबन रूप धन बिन स्वारथ हित जानि ।
सुद्ध कामना तें रहित प्रेम सकल रस खानि ॥15॥

अति सूछम कोमल अतिहि अति पतरो अति दूर ।
प्रेम कठिन सब तें सदा, नित इकरस भरपूर ॥16॥

जग म जब जान्यो परै अरु सब कहै कहाइ ।
प जगदीश रु प्रेम यह दोऊ अकथ लखाइ ॥17॥

जेहि बिनु जान कछुहि नहिं जान्यौ जात बिसय ।
सोइ प्रेम, जेहि जानि कै रहि न जात कुछ सप ॥18॥

दपति सुख अरु विषय रस, पूजा निष्ठा ध्यान ।
इन तें पर बखानियै, सुद्ध प्रेम रसखानि ॥19॥

मित्र कलत्र सुबन्धु सुत, इनमे सहज सनह ।
सुद्ध प्रेम इनमे नहो, अकथ कथा सविसह ॥20॥

इकअगी बिनु कारनहि इकरस सदा समान ।
गन प्रियहि सबस्व जो, सोई प्रेम प्रमान ॥21॥

डर सदा चाहे न कछु, सहै सबै जो होइ।
रहै एकरस चाहि कै, प्रेम बखानौ सोइ ॥22॥

प्रेम प्रेम सब कोउ कहै कठिन प्रेम की फाँस।
प्रान तरफि निकरै नही, केवल चलत उसास ॥23॥
प्रेम हरी को रूप है त्यौं हरि प्रेम सरूप।
एक होइ द्वै यौ लसै, ज्यौ सूरज औ धूप ॥24॥
ज्ञान ध्यान विद्या मती, मत बिस्वास बिबेक।
बिना प्रेम सब धूरि है अगजग एक अनेक ॥25॥

('प्रेम वाटिका' से)

सुन्दरदास

गुरु-महिमा

(1)

काहू सा न रोष तोष काहू सा न राग द्वेष
काहू सो न बैर भाव काहू सा न घात है
काहू सों न बकवाद काहू सो नही विषाद
काहू सो न संग, न तो काहू पच्छपात है ॥
काहू सो न दुष्ट बैन काहू सो न लेन देन
ब्रह्म को विचार कछू और न सुहात है ।
सुन्दर कहत सोई ईसन को महा ईस
सोई गुरुदेव जाके दूसरी न बात है ॥

(2)

गुरु बिन ज्ञान नही गुरु बिन ध्यान नही,
गुरु बिन आतम विचार न लहतु है ।
गुरु बिन प्रेम नही गुरु बिन नेम नही,
गुरु बिन सीलहु सन्तोष न गहतु है ।
गुरु बिन प्यास नहि बुद्धि का प्रकास नही,
भ्रमहू को नास नहि संसेइ रहतु है ।
गुरु बिन बाट नहि कौडी बिन हाट नही
सुन्दर प्रकट लोक बेद या कहतु है ।

(3)

गुर के प्रसाद बुद्धि उत्तम दसा को गहे,
गुरु के प्रसाद भय दुःख बिसराइये ।
गुरु के प्रसाद प्रेम प्रीतहु अधिक बाढे
गुरु के प्रसाद, राम नाम गुण गाइये ।

गुरु के प्रसाद मन आम की जुगति जान
गुरु के प्रसाद गूय म समाधि साइय।
सुन्दर कहत गुरुदेव जो कृपालु होइ
तिनके प्रसाद तत्व ज्ञान पुनि पाइये।

(4)

गुरु मात गुरु तात गुरु बधु निज गात
गुरुदेव नखसिख, सकल सवारयो है।
गुरु दिये दिव्य नन गुरु दिये मुख बैन
गुरुदेव सरवण दे सवद उचारयो है।
गुरु दिए हाथ पांव गुरु सीस भाव
गुरुदेव पिंड माहि प्राण आइ डारिया है।
सुन्दर कहत गुरुदेव जो कृपालु होइ
फिरि घाट घडि करि मोहि निस्तारयो है।

उपदेश

(5)

बार बार कह्यो तोहि सावधान क्यू न होइ
ममता की पोट सिर काहे को धरत है।
मेरो धन मेरो धाम मेरो सुत मेरी बाम
मेरे पसु मेरे ग्राम भूल्यो ही फिरतु है।
तू तो भयो बावरो बिकाइ गई बुद्धि तेरी।
ऐसो अन्ध कूप गेह तामे तू परतु है।
सुन्दर कहत तोहि नेकहू न आवे लाज
काज को बिगार के अकाज क्यो करतु है।

(6)

पायो है मनुष्य देह औसर बन्यो है गेह
ऐसी देह बार बार कहो कहा पाइये।
भूलत है बावरे ! तू अबके सयानो होइ
रतन अमोल सो तो काहे कू ठगाइये॥

समुझि विचार करि ठगन को सग त्यागि,
ठगिबाजी देखकर मन न डुलाइये ।
सुन्दर कहत ताते सावधान क्यू न होइ
हरि को भजन कर हरि म समाइये ॥

काल की विकरालता

(7)

मन्दिर महल विलायत है गज
ऊँट दमामा दिना इक दा है।
तातहु मात तिया सुत बाधन
देख धु पामर हात विछा है।
झूठ प्रपच सू राचि रह्यो सठ
काठ की पूतरि ज्यू कपि मोहै।
मेरि हि मरि कहै नित सुन्दर
आँखि लगे कहि कौन कू को है।

(8)

कै यह देह जराई कै छार
किया कि किया कि किया कि रिया है।
कै यह देह जमी महि गाडि
दिया कि दिया कि दिया कि दिया है।
कै यह देह रहे दिन चार
जिया कि जिया कि जिया कि जिया है
सुन्दर काल अचानक आइ
लिया कि लिया कि लिया कि लिया है।

(9)

दह सनेह न छाडत है नर
जानत है थिर हैं यह दहा ।
छीजत जाइ घट दिन ही दिन
दीसत है घट को नित छेहा ।

काल अचानक आइ गहै कर
ढाहि गिराइ करे तनु खेहा।
सुंदर जानि यहै निहचै धरि,
एक निरंजन सूं कर नेहा।

(10)

साइ रह्यो कहा गाफिल है करि
ता सिर ऊपर काल दहार।
धामस धूमसि लागि रह्यो सठ,
आइ अचानक तोहि पछारै।
ज्यूं बन मे मृग कूदत फांदत
चित्र गले नख सूं उर फारै।
सुंदर काल डरै जिनसे डर
ता प्रभु कूं कहूं क्यूं न सँभारे।

(11)

जब ते जनम लेत, तब ही ते आयु घटै
माई सो कहत मेरो बडो होत गात है।
आज और काल और दिन दिन होत और
दौर्‌यो दौरयो फिरत खेलत अरु खात है।
बालपन बीत्यो जब जोबन लगो है आइ
जोबनहु बीते बूढो, ढोकरो दिखात है।
सुन्दर कहत ऐसे देखत ही बुझि गयो
तेल घटि गये जैसे दीपक बुझात है।

देह एवं जगत की नश्वरता

(12)

कौन भाँति करतार कियो है सरीर यह,
पावक के माहि देखो पानी को जमावनो।
नासिका स्रवन नैन, बदन रसन बैन,
हाथ पाँव अंग नख, सीस को बनावनो।

अजब अनूप रूप चमक दमक ऊप,
सुन्दर सोभित अति, अधिक सुहावनो।
जाही छिन चेतन, मक्ति लीन होई गइ,
ताहि छिन लागत है सबको अभावनो।

(13)

मातु तो पुकार छाती, कूटि कूटि रोवति है
बापहू कहत मेरो नन्दन कहाँ गयो।
भैया हू कहत मेरी बाँह आजु टूटि भई
बहिन कहत मेरो, वीर दुख दे गयो।
कामिनी कहत मेरो सीस सिरताज कहाँ
उन्हें तत्काल रोइ, हाथ मे धोरा लयो
सुन्दर कहत काऊ, ताहि नाँहि जानि सक
बोलत हुतो सो यह, छिन मे कहाँ गयो।

आशा-तृष्णा

(14)

नैनन की पल ही पल मे छिन,
आधि घरी घटिका जु गई है।
जाग गयो युग याम गयो पुनि,
साँझ गई तब रात भई है।
आज गई अरु काल्ह गई
परसो तरसो कछु और ठई है।
सुन्दर ऐसहि आयु गई
तृष्णा दिन ही दिन होत नई है।

(15)

कन ही कन कू बिल्लात फिरे
सठ याचत है जन ही जन कू।
तन ही तन कूँ अति सोच करे
नर खात रहे अन ही अन कू।

मन ही मन की तृस्ना न मिटी,
पुनि धावत है धन ही धन कूं।
छिन ही छिन सुन्दर आयु घटी
कबहूं न गयो वन ही वन कूं।

(16)

जो दस बीस पचास भये सत
होइ हजार तू लाख मगैगी।
कोटि अरब्ब खरब्ब असंख्य
पृथ्वीपति होन की चाह जगैगी।
स्वर्ग पताल को राज करो
तृस्ना अधिकी अति आग लगैगी।
सुन्दर एक सन्तोष बिना सठ
तेरी तो भूख कभी न भगैगी।

आश्वासन

(17)

पाँव दिये चलने फिरने कहँ
हाथ दिये हरि कृत्य कराया।
कान दिये सुनिये हरि को जस
नैन दिये तिन मार्ग दिखायो।
नाक दिये मुख सोभत ता करि
जीभ दई हरि को गुण गायो।
सुन्दर साज दिया परमेसुर
पेट दिया बड पाप लगायो।

(18)

होई निश्चिंत करै मत चिंतहि
चोंच दई सोइ चिंत करेगो।
पाउ पसार परयो किन सोवत
पेट दियो सोइ पेट भरैगा॥

जीव जिते जल के थल के पुनि
पाहन मे पंचाय धरैगो।
भूखहि भूख पुकारत है नर
सुन्दर तू कह भूख मरगा॥

(19)

भाजन आप घड़े जितन
भरिहैं भरिहैं भरिहैं भरिहैं जू।
गावत हैं जिनके गुण कू
ढरिहैं ढरिहैं ढरिहै ढरिहैं जू॥
आदिहु अंतहु मध्य सदा
हरिहैं हरिहैं हरिहै हरिहै जू।
सुन्दरदास सहाय सही
करिहैं करिहैं करिहैं करिहैं जू॥

विश्वास

(20)

काहि कू दौरत है दसहू दिसि
तू नर देख कियो हरज का।
बैठि रहे दुरि क मुख मूदि
उघारत दांत खवाइ है टूका॥
गभ पवे प्रतिपाल करी जिन
होइ रह्यो तबही जड़ मूका।
सुदर क्यो बिल्लात फिर अब
राख हृदय विश्वास प्रभू को॥

(21)

खेचर भूचर जे जल के चर
देत अहार चराचर पोखै।
वे हरि जो सबको प्रतिपालत
ज्यू जिहि भाति तिहि विधि तोख॥

तू अब क्यू विश्वास न राखत
भूलत है नित धावहि धाव ।
सोहि तहाँ पहुँचाय रहै प्रभु
सुन्दर बैठ रहै बिन ओवै ॥

देह की मलिनता

(22)

देह तो मलिन अति बहुत विकार भरी,
ताहू माहि जरा व्याधि, सब दुख रासी है ।
कबहुँक पेट पीर कबहुँक सिर बाय
कबहुँक आँख कान मुख मे बिथा सी है ।
औरहू अनेक रोग नख सिर पूरि रहे
कबहुँक स्वास चलै कबहुँक खाँसी ह ।
ऐसो ये शरीर ताहि अपनो के मानत है
सुन्दर कहत यामे कौन सुख बासी है ॥

(23)

जा सरीर माहि तू अनेक सुख मानि रह्यो
ताहि तू विचार या में कौन बात भली है ।
मेद मज्जा मास रग रग मे रक्त भर्‌यो
पेटहू पिटारी सी में ठौर ठौर मली है ॥
हाडन सो भर्‌यो मुख हाडन के नैन नाक
हाथ पाँउ सोऊ सब हाडन की नली है ।
सुन्दर कहत याहि देखि जनि भूलै कोई
भीतर भँगार भरी ऊपर तौ कली है ।

मूर्खता

(24)

अपन न दोष देखे पर के औगुण पेखे
दुष्ट को स्वभाव, उठि निन्दा ही करतु है ।
जैसे कोई महल सँवारि राख्यो नीके कर
कीरी तहा जाय छिन्द्र ढूढ़त फिरतु है ॥

भोर ही तैं साम्य लग साझ ही त भोर लग,
सुंदर वहत दिन ऐसे ही भरतु है।
पाव के तरे को नही सूझ आग मूरख कूं
ओर सू वहत तेरे सिर पै बरतु है।।

मन

(25)

जो मन नारि की ओर निहारत,
तो मन होत है ताहि को रूपा।
जो मन काहू सु क्रोध करै पुनि,
तौ मन है तब ही तद रूपा।
जा मन मायहि माया रटै नित,
तो मन बूडत माया के कूपा।
सुंदर जो मन ब्रह्म विचारत
तो मन हात है ब्रह्म स्वरूपा।।

(26)

मनही के भ्रम ते जगत यह देखियत
मनही के भ्रम गय जात बिलात है।
मनही के भ्रम जेवरी म उपजत सांप,
मन के विचारे साप जेवरी समान है।।
मनही के भ्रम तें मरीचिका कू जल कहै
मनही भ्रम सीप रूपो सो दिखात है।
सुंदर सकल यह दीस मनही को भ्रम,
मनही को भ्रम गये ब्रह्म होई जात है।।

वाणी का महत्व

(27)

बचन ते दूर मिल बचन विरोध होय
बचन तें राग बढ़ बचन तें द्वेष हू।
वचन तें ज्यान उठ बचन [illegible]
बचन तें मुक्ति, बचन [illegible]।।

वचन तें प्यारी लाग, वचन तें दूर भगें,
 वचन तें मुरझाय वचन तें पोप जू ॥
सुन्दर कहत यह वचन का भेद एसा
 वचन तें वध होत वचन तें मोच्छ जू ॥

भजन न करने वाले

(28)

एक प्रभु सबही के उर अंतर
 ता प्रभु न कहु काहि न गाव ।
संकट माँहि सहाय करे पुनि
 सो अपना पति क्यू बिसरावै ॥
चार पदारथ और जहाँ लगि
 आठहु सिद्धि नवो निधि पाव ॥
सुंदर छार परो तिन के मुख
 जो हरि कू तजि आन कू ध्याव ॥

(29)

पूरण काम सदा सुख धाम
 निरजन राम निरञ्जन हारा ।
सेवक होई रह्यो सब को नित
 कीटहि कुंजर देत अहारा ॥
भजन दुख दरिद्र निवारण
 चित्त करे पुनि सौंझ सवारा ।
ऐसे प्रभू तजि आन उपासत
 सुंदर है तिनको मुख कारो ।

(सुंदर विलास से)

पद्माकर

भक्ति

(1)

ह्व थिर मंदिर में न रह्यो,
        गिरि कंदर में न तप्यो तप जाई।
राज रिझाए न कै कविता
        रघुराज कथा न यथामति गाई।
यो पछितात कछू 'पद्माकर
        मा सा कह्यो निज मूरखताई।
स्वारथ हू न कियो परमारथ
        यो ही अकारथ बैस बिताई।

(2)

भोग में रोग वियोग संयोग में
        योग में काय कलेस कमायो।
त्यौं पद्माकर वेद पुराण पढ्यो,
        पढ़ि कें बहु वाद बढ़ायो।
दौरयो दुराम में दास भयो प
        कहूँ विसराम को धाम न पायो।
खायो गमायो सु ऐसे ही जीवन,
        हाय पै राम को नाम न गायो

(3)

पेट कि चौंरे चपेट सही
        परमारथ स्वारथ लागि बिगारे।
यौ पद्माकर भक्ति भजी
        सुनि दंभ के द्रोह के दीह नगारे॥

जो गुरु जज्ञ जपातप जाल
बिहाल परे कलिकाल के मारे।
कौन के आसरे आस तजौ
सुधि लेत न क्यों दसरत्थ दुलारे ॥

(4)

द्यौस को रात करे जा चहै अरु,
रातिहु को करि द्यौस दिखावै।
त्यों पद्माकर सील के सिंधु
पिपीलिका के बल पौन फिरावै।
यों समरत्थ ते ते दसरत्थ को
सोइ करे जो कछू न मन भावै।
चाहे सुमेरु को राइ कर, रचि,
राइ को चाहे सुमेरु बनावै ॥

(5)

ऐ ब्रजचंद गुविंद गुपाल ! सुन्यो क्यों न एते कमाल किए मैं।
त्यों पद्माकर आनंद के नद हौ नंद नंदन ! जानि लिए मैं।
माखन चोरि क खोरिन ह्वै चले भाजि कछू भय मानि जिए मैं।
दूर न दौरि दुरयौ जु चहौ तो दुरौ किन मेरे अँधेरे हिए मैं।

(6)

देखि पद्माकर गुविंद की अमित छबि,
संकर समेत विधि आनंद सो गाढ़ो है।
खिझवत झूमत मुदित मुसुकात गहि
अंचल को छोर दोऊ हाथन सों आड़ो है।
पटकत पाँव हाय पजनी अनूप रव
नव-नव रंग म नीर मन बाढ़ो है।
आगे नन्दरानी के तनिक पय पीवे काज
तीन लोक ठाकुर सो ठुनकत ठाढ़ो है।

(7)

आइ संग आलिन के ननद पठाई नीठि
सोहत सोहाई सीस इडरी सुपट की।
कहै 'पद्माकर' गंभीर जमुना के तीर
लागी घट भरन नवेली नेह अटकी।
ताही समय मोहन जू बाँसुरी बजाई तामें
मधुर मलार गाई ओर बंसीवट की।
तानें लागे लटकी रही न सुधि घूंघट की,
घर की न घाट की, न बाट की न घट की॥

(8)

फाग के भीर अभीरनि त्यों गहि गोविंद लै गइ भीतर गोरी।
भाय करी मन की पद्माकर ऊपर नाय अबीर कि झोरी॥
छीनि पितम्बर कम्मर तें सु बिदा दइ मीड कपोलन रोरी।
नैन नचाय कही मुसुकाय—लला फिर आइयो खेलन होरी॥

(9)

व्याध हू तें बिहद असाधु हौं अजामिल तें
ग्राह तें गुनाही कहो तिन में गनाओगे।
स्योरी हौं न सूद हौं न केवट कहूँ को त्यों न,
गौतम तिया हौं जापे पग धरि आओगे।
राम सों कहत पद्माकर पुकारि तुम
मेरे महा पापन को पारहू न पाओगे।
झूठोई कलंक सुनि सीता-सी सती तजी हो,
साचोई कलंकी ताहि कैसे अपनाओगे।

(10)

पातकि पावन हौ तुम राम, रहे हम पातक में मदमाते।
दीन के बन्धु दयाल इक तुम हौ हम दीन दसान ही पाते॥

पालम ही तुम बिप्रन के, हम हू 'पद्माकर' विप्र कहात।
या तें रटौं न हटौं प्रभु पास तें, हैं तुम तें हम त बड़ नात।

(11)

जोग जप सध्या साधु साधन सबई तज
कीन्ह अपराध ते अगाध मन भावत।
तैते तजि औगन अनत 'पद्माकर' तो
कौन गुन ल कै महाराजहि रिझावते॥
जैसे अब तसे पै तिहार बडे काम के हैं
नहीं तो न एत बन कबहूँ सुनावते।
पावते न मो-सो जो प अधम कहूँ तो राम
कैसे तुम अधम उधारन कहावते॥

(12)

जाट हूँ धना स सदना के सद्ध साथी भये
हाथी हू उबारत न बार मन लाये हैं।
कहै पद्माकर कहे न परै ते ते जग
जे ते कपि रिच्छन के बिरद बढाये है।
साधन के हेत पन पाल्यो प्रहलाद हू को
याद करो जाय सेवरी के बेर खाये हैं।
राखत हैं राखये रखैया रघुनाथ, जन
आपने की बात सदा राखतेई आय हैं॥

(13)

ए रे जड जीव, जानि राखु बेद भेद यहै
समृत पुराण राखो यहै ठहराय है'
कहै 'पद्माकर सु माया परपचन का
पेखि परपच पेखने का सब भाय है!
या ते भज दशरथ नद रामचद जू को
आनद को कद कोसलेस रघुराय है!

जा दिन परैगो काम जम के जमुसन सो
ता दिन तिहारो काम राम नाम आय है ॥

(14)

साप हर पाप हर कलि के कलाप हर
तीखन त्रिताप हर तारक तरैया को।
कहै पद्माकर त्यों प्रगट प्रवासमान
पायन पियूष ऐसा जसे कामगैया को।
मुख सुखदायक सहायक सबन सूधो,
सुलभ सरन्य सरनागत अवैया का।
मीठो, भर कठवति परत न फीको नित
नीको निरदोष नाम राम रघरैया को॥

(15)

आयो मन हाथ तब आइबो रह्यो न कछु
भायो गरु ज्ञान फेरी भाइबो कहा रह्यो।
कहै पद्माकर' सुगंध की तरंग जैसे
पायो सतसंग फेरि पाइबो कहा रह्यो।
दान बल बानबल विविध वितान बल,
छयो जस पुंज फेरी छाइबो कहा रह्यो
ध्याया राम रूप तब ध्याइबा कछू न रह्यो,
गायो राम नाम तब गाइबा कहा रह्यौ॥

(16)

और सब संग सापनो है, जग आपनो एक हितू रघुराया।
ताहि न भूलिहु भूलियो तु पद्माकर पखनो पेख पराया।
प्रान मुंदे प जहाँ कि तहाँ जकि-सी रहि जाति जमाति औ माया।
माया चलाय चले क्यो चल, चलैं आपने संग न अपनी काया॥

(17)

यो मन लालचो लालच मे लगि,
लोभ तरगन मे अवगाह्यो ।
त्यो 'पद्माकर' गेह के दह के
नेह के काज न काहि सराह्यो ॥
पाप किये प न पातकि-पावन
जानि क राम को नेह निबाह्यो ।
चाह्यो भयो न कछू कबहूँ
जमराज हु सो वृथा वर बिसाह्यो ॥

(18)

एकन सो बैर करि प्रीति करि एकन सौं
एकन सो बैर है न प्रीति कछू गाढी ह ॥
कहै पद्माकर न होत चित चाही बात
बात करिव को अनचाही बीच ठाढी है ।
ऐते प न चेत फेरि केते बाघ बाघत है
दत लाग हिलन सपेद भई दाढी है ।
बाढी कहूँ भगति न राम की हिय म देखो
तृसना बिसासिनि या विलई ते बाढी है ॥

(19)

या जग जीवन को है यहै फल
जा छल छाँडि भज रघुराई ।
सोधि क सत महतन हूँ
'पद्माकर' बात यहै ठहराई ॥
ह्वै रहि हानि प्रयास बिना,
अनहानि न ह्वै सक कोटि उपाई ॥

जो विधि भाल म लीकि लिखी
सो बढाइ बढै न घट न घटाई ॥

(20)

काहे को बघम्बर को ओढि कर ग्रडम्बर,
काहे को दिगम्बर ह्वै दूब खाय रहिये ।
कहै पदमाकर त्यों काय के क्लेस नित,
सीकर सभीत सीस बात ताप सहिये ।
काहे को जपोगे जप काहे को तपोगे तप,
काहे को प्रपच पचपावक मे दहिये ।
रन दिन ग्राठो जाम राम राम राम राम
सीताराम सीताराम सीताराम कहिय ॥

(21)

रे मन साहसि साहस राख सु साहस सो सब जेर फिरैगे ।
त्या पदमाकर या सुख म दुख त्यो दुख म सुख मेर फिरगे ।
वैस ही वेणु बजावत स्याम सुनाम हमारि टेर फिरैगे ।
एक दिना नहिं एक दिना कबहू फिर वे दिन फेर फिरगे ॥

(22)

आवत गलानि जा बखान करो ज्यादा यह
काया मल मूत्र और मज्जा की सलीती है ।
कहै पदमाकर जरा भी जागि भीजी तब
छीजी दिन रैन जैसे रेनु ही की भीती है ।
सीतापति राम के सनेह वश बीती जो प
नौ तो दिव्य देह जम जातना ते जीती है ।
रीती राम नाम त रही जो बिन काम तो या
खारिज खराब हाल खाल की खलीती है ।

(23)

आस बस डोलत सु या को बिसवास कहा
सास बस बोले मल मास ही को गोला है।
कहै पदमाकर छनभगुर सरीर यह
पानी कसो फेंक जसे फलक फफोला है।
करम करोरा पच तत्त्वन बटोरा फेरि
ठौर ठौर जोला फेरि ठौर ठौर पोला है।
छोड हरिनाम नही पैहैं विसराम अरे,
निपट निकाम तन चाम ही को चोला है।

(24)

को किहि को सुत को किहि को पितु
को किहि को पति कौन की कोती।
कौन को को जग ठाकुर चाकर,
को पदमाकर कौन को गाती।
जानकी जीवन जानि यहै
तजि दे तू सब धन धाम औ धोती।
हौ तो न लाटत लोभ लपेट मे,
पेट कि जो प चपेट न होती॥

प्रकृति-वर्णन

(1)

पात बिन कीन्हे ऐसी भाति गन बलन के
परत न चीन्हे जे य लरजत लुञ्ज है।
कहै पदमाकर बिसासी या बसत के सु
एम उतपात गात गोपिन के भुञ्ज हैं।
ऊधा यह सूधा सा सन्देसो कहि दाजो भलो
हरि सों हमारे ह्या न फूले बन कुञ्ज है।

किंशुक गुलाब कचनार औ अनारन की,
डारन पै डोलत अगारन के पुंज है ॥

(2)

कूलन मे केलि म कछारन मे कुंजन म
क्यारिन में कलिन कलीन किलकत है।
कहै पदमाकर परागन म पौनहू म,
पातन मे पिक मे पलासन पगत है।
द्वार मे दिशान मे दुनी मे देश देशन मे,
देखो दीप दीपन म दीपत दिगत है।
वीथिन मे ब्रज मे नवेलिन मे बेलिन म
बनन मे बागन मे बगरो बसत है ॥

(3)

ऐ ब्रज चन्द्र चलो किन वा ब्रज लूक बसंत की ऊकन लागी।
त्यो पदमाकर पेखो पलासन पावक सी मनो फूकन लागी।
वै ब्रजनारि विचारि बधू बन बावरि लौ हिय हूकन लागी।
कारि कुरूप कसाइन पै सु कुहू कयलिया कूकन लागी ॥

(4)

मल्लिकान मंजुल मलिन्द मतवारे मिले
मन्द मन्द मारत मुहीम मनसा की है।
कहै पदमाकर त्यो नादत नदीन नित,
नागर नबेलिन की नजर निशा की है।
दौरत दररे देत दादुर सुदुंदै दीह
दामिनी दमकनि दिसनि मे दशा की है।
बहलनि बुंदनि बिलोको बगुलानि बाग
बगलानि बेलिन बहार बरसा की है ।

वीररस

(1)

सोहै भ्रज ओढे जे न छोडे सीम सगर की
लगर लगूर उच्च ओज के अतका म ।
कहै पदमाकर त्यों हुकरत फुकरत
फला फमात फाल वाधत फलका मे ।
आगे रघुवीर के समीर के तनै के सग,
तारी द तडाक तडातड तमका म ।
सका है दसानन को ढका दै सुबका वीर
ढका दै विजै को कपि कुद पर्यो लका मे ॥

(2)

जाही ओर मोर पर घोर घन ताही ओर
ओर जग जालिम को जाहिर दिखात है ।
कहै 'पदमाकर' अरीन की अगाई पर
माहब सवाई की ललाई लहरात है ।
परिम प्रचड चमू हरपिन हाथी पर
दखत बात सिह माधव को गात है ।
उदत प्रसिद्ध जुद्ध जीति ही क मोदा हिन
रोदा ठनकारि तन होदा म न मान है ॥

(3)

तीर तमवाहीं जे सिपाही चढ़ पायन पै
स्याही चढ़ अमित अरिदन की ताप प ।
कहै 'पदमाकर' निसान चढ़ हाथिन पै
धूरि धार चढ़ै पाकसासन क सीस पै ।
गाजि चतुरग चमू जग जीतबे क हेतु
हिम्मत बहादुर चढ़त फर पन पै ।

लाली चढ़ै मुख पै, बहाली चढ़ै ग्राहन पै
काली चढ़ै गिद्ध पै कपाली चढ़ै बैल पै ॥

दानवीर

(1)

सम्पति सुमेर की कुबेर की जु पावै ताहि
तुरत लुटावत विलम्ब उर धारै ना।
कहै पदमाकर सुहेम हय हाथिन के
हलके हजारन के वितरि विचारै ना।
गज गज बक्स महीप रघुनाथ राव
याही गज धोखे कहूँ काहू देइ डारै ना।
याही डर गिरिजा गजानन को गोई रही,
गिरि तें गरे तें निज गोद तें उतारै ना।

(2)

एकनि बिनु ह दयो झुण्डन के झुण्ड रिपु
मुण्डन की मालिका दई ज्यों त्रिपुरारी को।
कहै पदमाकर करोरन को कोष दये
षोडस हू दीन्ह महादान अधिकारी को।
ग्राम दये धाम दये अमित अराम दये
अन्न जल दीन्ह जगती के जीवधारी को।
दाता जयसिंह दोय बात तौ न दीन्ही कहू
बैरिन को पीठ और डीठि परनारी को॥

गंगा-स्तवन

(1)

विधि के कमण्डल की सिद्धि है प्रसिद्ध यही
हरि पद-पंकज प्रताप की लहर है।

कहै 'पदमाकर' गिरीस सीस मंडन कै,
मुंडन की माली ततकाल अघहर है।
भूपति भगीरथ के रथ की सुपुण्य पथ,
जन्हु जप जाग फल फैल की फहर है।
छेम की छहर गंगा रावरी लहर
कलिकाल को कहर जमजाल को जहर है॥

(2)

कैधों तिहू लोक की सिंगार की बिसाल माल
कधौं जगी जग मे जमाति तीरथन की।
कहै 'पदमाकर' बिराजे सुर सिन्धु धार
कधौं दूध धार कामधेनुन के थन की।
भूपति भगीरथ के जस की जलूस कैधौ
प्रगटी तपस्या कैधौं पूरी जन्हु जनकी।
कैधौं कछू राख राका पति सा इनाका भारी,
भूमि की सलाका के पताका पुन्यगन की॥

(3)

जम को न जोर जब पापिन प चल्यो तब
हाथ जोरि गंगा जू सो चुगली करे खरे।
बडेन प ढरी प ना ढरो देखि तुच्छन प
कहै पदमाकर सुनावत हरे हरे।
बडेन पै ढरे बडी पाइय बडाई देखो
इस प ढरी ता तुम्हे ईस सीस प ढरें।
तुच्छन को देती जैसो नारायन रूप तसो
तुच्छ तुम्है तुच्छ करि पावन तरे घर॥

(4)

करम को मूल तन तन मूल जीव जग
जीवन को मूल अति आनन्द ही धरिबो।

कहै 'पदमाकर' ज्यो आनद को मूल, राज
राजमूल केवल प्रजा का भौन-भरिबो।
प्रजामूल अन्न मत्र भन्नन को मूल मेध,
मेघन को मूल एक जज्ञ अनुसरिबो।
जज्ञन को मूल धन धन मूल धम अरु
धम मूल गगा जल बिन्दु पान करिबो॥

(5)

आस करि आयो हुतो मैया पास रावरे मैं,
गाढ हू के पास दुख दूरि बुटि बुटिगे।
कहै पदमाकर कुरोग से सघाती तेऊ
गल मे चलत घूमि घूमि घुटि घुटिगे।
दगादार दोष द्रोह दारिद बिलाइ गये
फिकिर के फद बिन छार छुटि छुटिगे।
जौ लो आऊँ-आऊँ तेरे तीर पर गगा तौ लौं,
बीच ही म मेरे पाप पुञ्ज लुटि लुटिगे॥

(6)

जमपुर द्वारे लगे तिनम केवारे कोऊ,
हैं न रखवारे ऐस बन के उजारे हैं।
कहै पदमाकर तिहारे प्रन धारे तेउ,
करि अघ भारे सुरलोक मे सिधारे हैं।
सुजन सुखारे करे पुण्य उजियारे अति
पतित क तारे भव सिन्धु तें उतारे हैं।
काहू ने तारे तिन्हे गगा तुम तारे, और
जेते तुम तारे तेते नभ मे न तारे हैं॥

(7)

सुखद सुहाई मन भाई मुनि देवन के
निखिल निकाई रूह वेदन मे गाई है।
कहैं पदमाकर' कहाँ लौं साधुनाई कहौ
सब ही पै एकसी दया-सी बगराई है।
पुन्यताई भारत उधारन अधमताई
नीक ठकुराई की ठसक ठहराई है।
जहा जहा जम की जमाति की ही करामाति
वहा तहा फिरै देखि गगा की दुहाई है ॥
(गगालहरी से)

सूर्यमल्ल मिश्रण

वीर के प्रतीक

1 सिंह

१

निधड़क, सूतो केहरी, तो भी विमुहा पाव ।
गज-गडा घीर न घर, बच्च पड वध—वाव ॥

२

पग पाछा, छाती धडक, कालो-पीलो दीह ।
नैरण मिच साम्हो सुणे कवण हकाल सीह ?

३

हेली ? घर घर की हुव, पूचा छक पैगाम ?
हाथी हामल माहण, नाहर जिण रो नाम ॥

४

सोयो मैं घर मे अवट, कायर जबुक काम ।
सीहा केहा देसडा, जेथ रहै सो धाम ॥

५

जिण वन भूल न जावता, गैद गवय गिडराज ।
तिण वन जबुक तासडा, ऊधम मढ आज ॥

६

डोह गिड वन वाडिया, द्रह ऊडा गज दीह ।
सोहण नेह सकक वो, सहल मुलाणो सीह ॥

2 वराह—

७

तु डा गज, फेटा तुरी, डाढा भड ग्रोभाड ।
हेकण कवलं घु ँदिया, फौजां पायर पाड ।।

८

पूरा आकुल पाठडा, भाला पडता भार ।
हेकण कवसा बाहिरा, भाडा भाडा डार ।।

९

सुहडा ग्रोर सिकारसो, मन म या न समाय ।
भाला ऊ गिड भाजसी, डाडा प्रलय दिखाय ।।

3 नाग—

१०

बांबी भीतर पोढियो, कालो दबक काय ?
पूगी ऊपर पाधरो ग्राव भोग उठाय ।।

4 धवल (बैल)

११

धवल धयप रे धणी ! की दुमणो घण भार ?
ओडे धर रो ग्रावणो, वक पहाडा पार ।।

वीर के लक्षण

१२

बल सोध जण जण बहे, कस बांधे करवाल ।
परसम डा अर कायरा, भहभहियां भवाल ।।

१३

रुड हुवा जीवं जिके, सदा न हेर साथ ।
सीहां र गत सोनसे, वं मड धान हाथ ।।

१४

रण पाखे दुश्मनो रहै, साज न नण समाय ।
पग सपर पाछा दियण, सो वानत नहाय ।।

१५

बिण माथ वाढ़ै दला, पोढ़ करज उतार ।
तिण सूरा रो नाम ले, भड़ बाँधै तरवार ॥

१६

सीह न बाजो ठाकुरां ! दीन गुमारो दीह ।
हाथल पाड़ै हाथिया, सो भड़ बाजै सीह ॥

१७

सूता नाहर-मारग्या, सात न छोड़ै सूर ।
कंत ! बिणट्ठा काच-सा, दो ही बिलसां दूर ॥

वीर और मातृभूमि

१८

सूता घर-घर आगणां [illegible] ।
लाग धारां डापा-मूरा, [illegible] ॥

१९

खाटी धूल री लोथणा, नेप पर पर नीं ।
रसा कयारी रावला ! बरती को ही वीं ॥

२४

वीर माता

हूँ बलिहारी राणियाँ, भ्रूण सिखावण भाव।
नालो बाढण री छुरी, झपट जणियो साव॥

२५

हूँ बलिहारी राणियां, साचा गरभ सिमाय।
जाचा हूदे लापणें, हरख थी ढिग साय॥

२६

हूँ बलिहारी राणिया, जाया वस छतीस।
सर सलूणो चूण न, मोल समर पै सीस॥

२७

हूँ बलिहारी राणिया, थाल बजाण दीह।
बीद जमी रा जे जण, साम्रल टीढा सीह॥

२८

इला न देणी आप री, रण-खेता भिड जाय।
हालरिया हुलराय, मरण-बडाई माय॥

२९

बाला! चाल म बीसरे, मो थण जहर समाण।
रीत मरता शील की, ऊठ, थियो घमसाण॥

वीर सास

३०

ग्राज घरे सासू? कहे, हरख अचानक काय?
वहू बलेवा हुलसैं, पूत मरेवा जाय॥

३१

सुण मरियो सुत हेकलो, सासू ग्रभण धार।
मो जाणियो कायर थयो, बेटी! बलण निवार॥

३२

सुत धारा रज रज थियो बहू बलेवा जाय।
सखिया डूगर लाज रा सासू उर न समाय॥

वीर पत्नी

३३

सहु पड़ौस कायर नरां, हेली ! वास सुहाय ।
बलिहारी जिण देसड़ै, माथा मोल बिकाय ॥

३४

धण नूं आलगसी घणौ ! सुणियां वागो मार ।
हालीजै उण देसड़ै, प्राणां-रा ब्योपार ॥

३५

कायर-नारां मीठ-सुख, रोक वालम गेह ।
थारा भजको मो धणी, भलां लगाडै देह ॥

३६

कंत ! लखीजै दोय कुळ, नथी फिरती छांह ।
मुंडियां मिळसी गीदड़ो, मिळ न धण-री बांह ॥

३७

पूजाणो गज मोतियां, मीडाणो सर सूझ ।
बीजाणो धण चामरां है पूठो मम सूझ ॥

३८

तन दुरग, सर ओव तन कड़णो करसां हूव ।
पीव बिगाड्यो जे बड़ो, नाम रहीजै नेम ॥

३९

कमण घरे मां किम बण जोव सगय ओव ।
ब न्नि जो कायर बगो, पीहर भेजो पीव ॥

४०

साथण ! आज न मांड दध, काल्ह सुणीजै जंग ।
थारो मारो जे धणी, तो दाख धण रंग ॥

४१

बिण मरियां, बिण जीतियां, जे धव आवै धाम ।
पग-पग चूड़ी पाछटूं, जो रावत-री जाम ॥

वीर बालक

४२

रण खेती रजपूत री, वर न भूल बाल।
बारह वरसां बाप-रो, लहै वैर लकाल॥

४३

मोर मुवा सुण मोहडे, बरसा पांच विचास।
घर-मे मायड घातियो, बटक पूचा बाल॥

४४

कुल थारो रण-पौढण, मो नू कहती माय।
प्राणा माहक पेखिया, वजियो वरज काय?

४५

मन सोचे जाणे मती मो नू बालक माय!
वर पराया बाहुड, जठ न घर-रा जाय!

४६

बाप गयो ले माहेरो काको जात कडू व।
तोय भचायो छोकर, वरी र घर बूब॥

४७

भोला जाणे भूलिया, बरसा आठा बाल।
मेप पराणें सिवणी, कवर जणें सो काल॥

वीर पति

४८

आक-पलासा भूपडो, देवै कीध न हत!
हियें म तो मी ऊतर कीस सुमाव कत!

४९

टोट सरका मीतडा, घाते ऊपर घास।
वारीज मड-झूपडा, अधिपतिया आवास॥

५०

इसड टोट हूं सखी! वारी बार अनत।
पोत जणी मे मातियां चूडो मैंगल दत॥

५१

बिण दामां बिपस मदा, दामा दुरलभ नाग ।
याम मढा घर नारिया, चूडो-पात सुहाग ।।

५२

पहल मिले घण पूछियो बिण कीधा किण हुव्य ?
बीजड साहे बाजिया, इण डाकण म प्रव्य ।

५३

पेटी मोड छिपावियां, जा ण घाव न जीव ।
हेली ! दियसा पाहुणो, पडव दीठो पीव ।।

५४

गोरण दिन सूती सखी !, बागा ढोल विगास ।
बोहू उसोसो लोंबियो, जागो पटव निसास ।।

५५

माय कसाली ! एम कियो, सज गुमावण रग ।
पूत दुमार छाडियो जीत बोगुण जग ।।

५६

मद लेता मामं मती, भोली ! आयुक मीत ।
छबियो सामां छांगसां, साती डाहल सौत ।।

५७

किण दिन देगू बाटडी घातां पडवै सूफ ?
घाव भरतां घाव नो बीना जावण मूफ

५८

हेली ! पीवर देसिया, ग्रेकण रात सुहाग ।
पर सामां दल जालिया दूणा दूण दुहाग ।।

५६

दिन में देगू सूफ्तो, निस पाबा बरडाय ।
मरो न मूंगो नाट भर, हेमी ! इस घर आय ।।

६०

पहर चवत्थ पोढियो, गिणतो फौज गरीब ।
मेन घडी अब जीभ-नू, बरा आए नकीब ॥

६१

भाभी ! देवर नीद-वस, बोलीज न उतास ।
पगतां धावा चँवसी, ज सुणसी बवास ॥

६२

घोरपिया सूतो धणी, कुरलै चकवी ! काय ? ।
देखीजै मुख दीह र, सुग दो जाम सवाय ॥

६३

धरी-धाड धासडी, सदा खणक खाग ।
हेली क दिन पाहुणो ऊडा माग सुहाग ? ॥

६४

मतवालो जोवन सदा तूझ जवाई माय ! ।
पडिया घण पहली पडै बूढी घणा न सुहाय ॥

६५

घर-घर घर विसाविया दिन दिन लू वै धाड ।
हेली ! मो धव टेक्लो, जड न धाम किवाड ॥

युद्ध भूमि को प्रस्थान

६६

ऊडा ओघाड गयण, वसुधा पाड वाह ।
तो भी तोरण-बीद तिम, धीरो धीरो नाह ॥

६७

वाज कुमत विसासतो, धीम वेग घपाय ।
भाभी ! तोरण बीद जिम, जोवो, देवर जाय ॥

६८

देवर भाभी ! देखणो, ढाहण गज-नीसाण ।
सोकरडा रा सिंधु म, पूगो पवन प्रमाण ॥

६९

क दीठो हय आवतो, कै दीठो अर-फौज ।
हेली ! कवण सिखावियो, उडणो उडणो ओज ? ॥

७०

युद्ध का आरम्भ

सपेखे वाल्हा सगा, मिल गल-बथ्था मार ।
पहली वाहण पाहुणा, मडीज मनुहार ॥

७१

तोपां घर दरजा पड़े, झड़ गिरां सिर झाट ।
जाण सागर खीर—रै, मदर रो भरड़ाट ॥

1 शेषनाग

७२

नाग ! धमका को पड ? नागण ! धर मचराय ।
हण रा मागणहार जे, आज मिळाणा आय ॥

2 ककणी

७३

थाय उताली मवणी ! जे मद पीवण जेज ।
मत समर्णं हेमसो फटका डाहि कलज ॥

3 योगिनी

७४

जोगण ! पहली खाय पल, करै उतावल काय ? ।
भर खप्पर वाल्है रुधिर, देसी मत धपाय ॥

७५

काली ! पीस कड़ाह मे, की खप्पर तो हथ्थ ? ।
हेक साथ धपाहडी, आवे दस गज मथ्थ ॥

4 महादेव

७६

ईस ! घणा जे मागता, तो सीस गिर झोड़ ।
घड़ देखण धणा रो घणा, पड़सी अर बहोड़ ॥

६०

पहर पचरप पौढ़िया, गिणतो फौज गरीब ।
पेट पड़ी बक जीभ-नू, बरा झाण नरीब ॥

६१

भाभी ! देवर नींद-वस, बोलीज न उतास।
पगतां पाबो चंबसो, ज सुणशी बयाल ॥

६२

पौरपियां मूतो घणो, कुरस चकवी ! काय ? ।
देसीजै मुख दीह र, सुख दो जाय सवाय ॥

६३

वरी-वाढ वासडी, सदा गरण रा ग ।
हेली क दिन पाहुणो, ऊठा भाग सुहाग ? ॥

६४

मतवासो जोबन सदा सूझ जबाई माय ! ।
पाडया घरा पहली पडे, बूढो घरा न सुहाय ॥

६५

घर घर वर विसावियां, दिन दिन सू बै धाड ।
हेली ! मो मव देखसो, जड न थाम किंवाड ॥

युद्ध भूमि को प्रस्थान

६६

ऊडा ओद्धाड गयण, वसुधा पाडै वाह ।
वो भी तोरण-बीद तिम, धीरो धीरो नाह ॥

६७

वाज झूमत विसासतो, धीम वेग घपाय ।
भाभी ! तोरण बीद जिम, जोवो, देवर जाय ॥

६८

देवर भाभी ! देखणा, ढाहण गज नीसाण ।
सोकरडा रा सिंधु मे, पूगो पवन प्रमाण ॥

६९

के दीठा हय आवता, कै दीठा घर फौज ।
हेली ! कवण सिखावियो, उडणो उडणो आज ? ॥

७०

युद्ध का आरम्भ

सपेखे वाल्हा सगा, मिल गल-बथ्था मार ।
पहली वाहण पाहुणा, मडीज मनुहार ॥

७१

तोपां घर दरजा पड़े, झड़ गिरां सिर झाट ।
जाणे सागर खीर—रे, मदर रो घरडाट ॥

1 शेषनाग

७२

नाग ! धमका की पड़ै ? नागण ! घर मचकाय ।
इण रा मागणहार जे, आज भिड़ाणा आय ॥

2 कंकणी

७३

काय उताली कंकणी ! जै मद पीवण जेज ।
मत समप्पे हेकसो कटका बाहि कलेज ॥

3 योगिनी

७४

जोगण ! पहली खाय पल, करै उतावल काय ? ।
भर खप्पर वाल्हे रुधिर, दमो वज्र पयाय ॥

७५

कालो ! पीत धकाह ले, की खप्पर तो हथ्थ ? ।
हेक साथ धपाहडी, माथ दस गज मथ्थ ॥

4 महादेव

७६

ईस ! पणा ज लागता, तो भीम गिर छोर ।
धड़ देवल पड़ रो पड़ा, दरसो बर बहोड़ ॥

७७

युद्ध वर्णन

देख सखी ! होली रमै, फौजा में धव श्रेक ।
साजर मदर सारखो होहै ग्रनड ग्रनेक ।।

७८

देख सहेली ! यो धणी, अजको वाग उठाय ।
मद-प्याला जिम श्रेकलो, फौजा पीवत जाय ।।

७९

पग पग घटिया पाहुणा, खागा सहुणी खांत ।
पीव पहुसै पात-मे, मूल कैन दुमात ? ।।

८०

सैजा मे घर घर सखी ! आण धजर प्रजाण ।
धारा मे राख धजर, सो कुण कत समाण ? ।।

८१

मूझ अचभो हे सखी ! कत बखाणू कीस ? ।
विण माथ वाढ दला, ग्रांख हिये क सीस ? ।।

८२

की हेलो ! अचरज कहूँ कत धणी र काज ? ।
मच अधूरे मावतो, ग्रांख न माव ग्राज ।।

८३

करडरो कुच नू मासता पडवा हुदी चोल ।
ग्रब फूला जिम आगम, सेला री घमरोल ।।

वीर द्वारा शत्रुओ का विनाश

८४

होव घर घर हाय रे ! रोवै वर-बर नार ।
भाभी ! देवर-नू कहो, ग्रब तो रोस उतार ।।

८५

भाभी ! हेकरण वर मे, बोलविया दस-शीस ।
अब तो देवर ओहुडो, सच मार न सीस ॥

८६

आटो सासू ? आप रो सो सेवो कुल मार ।
जायो मरजो, जगत रा, आटा लियण उधार ॥

८७

ईसो, घर-घर ऊतरै, चूडा मूराण चीर ।
दया न मानै दोयणा, बाई ! था रो बीर ॥

शत्रुओ की पराजय

८८

पेख सहेली ! पार रा, भरा गिरण न रहाय ।
अेकण बाण उतारिया, जाण सिमडी जाय ॥

८९

दीधा दिस दिस सू दिया, ऊठे बस भजाय ।
कुंभकरण रा भाडिया, जाणै बदर जाय ॥

विजयी पति का आगमन

९०

ढोल बरज मव भेज पर घर मामर सु धाम ।
पावा कत पधारिया पोवा हत प्रणाम ॥

• ('वीर सतसई' से)

× × ×

शमशेर बहादुर सिंह

उषा

प्रात नभ था बहुत नीला शंख जैसे
भोर का नभ

राख से लीपा हुआ चौका
[अभी गीला पड़ा है]

बहुत काली सिल जरा से लाल केसर से
कि जैसे धुल गयी हो

स्लेट पर या लाल खड़िया चाक
मल दी हो किसी ने

नील जल में या किसी की
गौर झिलमिल देह
जैसे हिल रही हो

और
जादू टूटता है इस उषा का अब
सूर्योदय हो रहा है।

सींग और नाखून

सींग और नाखून
लोहे के बख्तर कंधों पर।
सीने में सूराख हड्डी का।
आँखों में घास-काई की नमी।

एक मुर्दा हाथ
पाव पर टिका
उलटी कलम थामे ।

तीन तसलों में कमर का घाव सड़ चुका है ।

जड़ों का भी कड़ा जाल
हो चुका पत्थर।

भुवनेश्वर

न जाने कहाँ किस कोच में आज, जाने किस
सदाव्रत का हिसाब बैठे तुम लिख रहे होगे (अपनी
बही में ?)—जहाँ पता नहीं प्राप्त भी होगा
तुम्हें कोरी चाय या एक हरी पुड़िया का बल
भी ?—हिसाब, मसलन ताड़ी कितन
की ?—कितने की देसी ?—और, रम ?
कितनी अधिक-से-अधिक, कितनी कम से-
कम ? कितनी असली, कितनी ।

(इन्सान रोटी पर ही जिन्दा नहीं इस
सच्चाई को और किसने अपनी बड़ी मुस्कुराहट
भरी भूख के अन्दर महसूस किया होगा
एक तपते पत्थर की तरह, भुवनेश्वर
जितना कि तुमने !)

गजल

(1)

जी को लगती है तेरी बात खरी है शायद
वही शमशेर मुजफ्फरनगरी है शायद

आज फिर काम से लौटा हूँ बड़ी रात गये
ताक पर ही मेरे हिस्से की धरी है शायद

मेरी बातें भी तुझे खाबे-जवानी सी हैं
तेरी आँखों में अभी नींद भरी है शायद

× × ×

एक कलम है और सौ मजमून हैं,
एक कतरा खूने दिल तूफान है ।

(2)

वही उम्र का एक पल कोई लाए
तड़पती हुई सी गजल कोई लाए

हकीकत को लाए तसव्वुर से बाहर
मेरी मुश्किलों का जो हल कोई लाए

कहीं सद खूं में तड़पती है बिजली
जमाने का रद्दोबदल कोई लाए

उसी कम निगाही को फिर सौंपता हूँ
मेरी जान का क्या बदल कोई लाए

दुबारा हमें होश आए न आए
इशारों का मौका महल कोई लाए

नजर तेरी दस्तूरे फिरदौस लायी
मेरी जिंदगी में अमल कोई लाए

(3)

जहा मे अब तो जितने रोज
अपना जीना होना है,

तुम्हारी चोटें होनी हैं
हमारा सीना होना है ।

वो जल्वे लोटते फिरते हैं
खाको खून इसां में

तुम्हारा तूर पर जाना
मगर नाबीना होना है।*

कदमरजा है सूए बाम
एक शोखी कयामत की

मेरे खूने हिना परवर से
रगों जीना होना है !

वो कल आयेंगे वादे पर
मगर कल देखिए कब हो!

गलत फिर हजरते दिल,
आपका तस मीना होना है ।

गम ऐ शमशेर, बस कर,
अब कहीं उजलतगर्जी हो जा—

कि हर शीशे को महफिल में
गदाए मीना होना है ।

*यह मिसरा मेरा है मामा स्व० बाबू स'

(4)

ईमान गड़बड़ी मे है दिल के हिसाब मे ।
लिक्खा हुआ कुछ और मिला है किताब मे ।

दिल जिनमे ढूंढता था कभी अपनी दास्ता
वो सुर्खियां कहां हैं मुहब्बत के बाब मे !

ए दिलनेवाज ! पहलू ही जब दिल के और हो,
क्या खिलवतो मे लुत्फ, धरा क्या हिजाब मे !

उस आस्तां तक हमको बहारो मे ले के जाओ,
जिस पर कोई शहीद हुआ हो शबाब मे !

अमन का राग

सच्चाइयाँ
जो गगा के गोमुख से मोती की तरह बिखरती रहती हैं
हिमालय की बर्फीली चोटी पर चांदी के उन्मुक्त नाचते
परो मे झिलमिलाती रहती हैं
जो एक हजार रगो के मोतियो का खिलखिलाता समदर है

उमगो से भरी फूलो की जवान कश्तियाँ
कि बसत के नये प्रभाव सागर मे छोड दी गयी है ।

ये पूरब पश्चिम मेरी आत्मा के ताने बाने हैं
मैंने एशिया की सतरगी किरनो को अपनी दिशाओ के
गिर्द

लपट लिया
और मै यूरोप और अमरीका की नम आँच की धूप छाँव
पर

बहुत हौले हौले नाच रहा हूँ
सब सस्कृतियाँ मेरे सरगम मे विभोर हैं
क्योकि मै हृदय की सच्ची सुख शाति का राग हूँ
बहुत आदिम, बहुत अभिनव ।

('कुछ और कविताएँ से)

बात बोलेगी

बात बोलेगी,
हम नही ।
भेद खोलेगी
बात ही ।

सत्य का मुख
झूठ की आँखें
क्या देखें !

सत्य का रुख
समय का रुख है
अभय जनता को
सत्य ही सुख है,
सत्य ही सुख ।

दैत्य दानव,
भीषण, क्रूर
स्थिति, कगाल
बुद्धि, घर मजूर ।

सत्य का
क्या रग है ?—
पूछो
एक सग ।

एक—जनता का
दुःख एक ।
हवा में उड़ती पताकाएँ
अनेक ।

दैत्य दानव । क्रूर स्थिति ।
कगाल बुद्धि मजूर घर भर ।
एक जनता का—अमर वर
एकता का स्वर ।
—अन्यथा स्वतन्त्र्य-इति ।

प्रेम की पाती

(घर के वसन्ता के नाम)

1

कौन के पीतम, कौन की पाती !
आस लगाये दीया न बाती !
　　　　ओ मेरे साईं और मेरे ईश्वर
　　　　तेरा ही नाम अब प्रानो की थाती !

होली का भय, दीवाली का आतंक
ईद मुहर्रम, एक ही भांति !
　　　　पर्व के दिन और ऐसे भयानक
　　　　छलनी छलनी रे देश की छाती !

प्रेम के संगी, धर्म के साथी
ऊँघ गये सब संग-संघाती !
　　　　काले बाजार मे धर्म की दुल्हन
　　　　कैसे ये दूल्हा ! कैसे बराती !

हिन्दू कि मुस्लिम सिख कि इसाई
भारतवासी कौन एक जाति !

2

कौन पठायी किन्ने रे बाँची
प्रेम की पाती साँची रे साँची !
　　　　मै तो न जानूँ उर्दू कि हिन्दी
　　　　प्रेम की बानी साँची रे साँची !

तीन शेर

लिखा है मुकद्दर मे दर-दर की दुआ मांगो ।
सय्यर-मह ओ मह्र ओ मख्तर की दुआ मांगो ।

इंसान के पर्दे मे रूठा है खुदा हमसे
इस घर की दुआ मांगो, उस घर की दुआ मांगो ।

फिर सुख़ निशां बनकर कांधे पे चढ़े तनकर
जो सर है हथेली पर उस सर की दुआ मांगो ।

('उदिता' से)

ओ मेरे घर

ओ मेरे घर
ओ हे मेरी पृथ्वी
साँस के एवज तूने क्या दिया मुझे
—ओ मेरी माँ ?

तूने युद्ध ही मुझे दिया
प्रेम ही मुझे दिया क्रूरतम कटुतम
और क्या दिया
मुझे भगवान दिये कई-कई
मुझसे भी निरीह मुझसे भी निरीह !
और अद्भुत शक्तिशाली मकानोंकी प्रतिमाएँ !

ऐसी मुझे जिन्दगी दी
ओह
आँखे दी जो गीली मिटटी का बुदबुद सी हैं
और तारे दिये मुझे अनगिनती
साँसो की तरह
अनगिनती इकाइयो मे
मुझसे लगातार दूर जाते
मौत की व्यथ प्रतीक्षाओ से।

और दी मुझे एक लम्बे नाटक की
हसी
फैली हुई
दर्शकशाला के इस छोर से उस छोर तक

लहराती कटु क्रूर !

फिर मुझे जागना दिया, यह कहकर कि
लो और सोओ !
और वही तलवारें अँधेरे की
अंतिम लोरियों के बजाय !

इंसान के अँखौटे में डालकर
सब-कुछ तो दे दिया,
जब मुझे मेरे कवि का बीज दिया कटु तिक्त !

फिर एक ही जन्म में और क्या क्या
चाहिए !

('इतने पास अपने' स

अकाल

भूख
    अनाज
मुनाफाखोर का
अनाजखोर का
    बिलकुल छिपा सा, निर्जन में,
        अँधेरा बाजार
    जिसके चारो ओर गवरमेंट
    कंकरीले रुपे लिये दान समितियाँ
    और भूखी लाशों से दूर,
    सूने-सूने से खिचड़ी-रसोइयों वाले,
    हम तुम, वे, सब
    इस मौनताडव के चारो ओर
    असहाय से चक्कर लगा रहे हैं,
    समझ नहीं पा रहे हैं
    कुछ सोच तक नहीं पा रहे हैं,
    केवल कुछ कर पा रहे हैं ऐसे
    कि मानो कुछ कर पा नहीं रहे हैं

    मृत्यु का यह नया रूप है स्पष्ट
        हमारे जीवन के बीच
लय ध्वनि स्वर-संकेत और संज्ञा से हीन
अभूतपूर्व ।

दुश्मन के सीने में
विजय का निश्चित भी तौर हम,
खुली-खुली खोखली आँखों के द्वार पर प्रहरी,
धोबी की रस्सियों पर लटकी
सूखती चोलियों के-से स्तनों की
लाज रखने वाले हम
तेल की दुकान पर बंधी लटकी
झिल्ली की कुप्पियों के से
रुंड मुंड छोटे छोटे
असंख्य बाल-समूहों के पायक हम,

उन्नत मस्तक भारतवासी
अपने ही दोष निर्घोषों से मानो
मारवाड़ का मरुवातावरण कंपित कर देंगे हम,
आज मरना सीख रहे हैं
इस मूक शांत युद्ध में,
अपनी शत्रु भयविहीन सड़कों और गलियों में
जहां कुत्ता का जीवन भी दीर्घतर लगता है,
स्पृहणीय, केवल
अपना ही दयनीय।

क्यों जन्मा था मनुष्य
बीसवीं सदी के मध्यान्ह में
यों मरने के लिए?
झुलसा सा पतझड़ का पत्र
चिथड़ों का बादल सा
धूमिल संध्याओं में,
हवा का निरीह कंप केवल!

वीर बलिदान की सदी है यह!
हमी उठेंगे क्या?
वीर बलिदान की सदी है यह

नानाविध पूर्ण शक्तिशाली
        समृद्ध ?
स्वर्ण इतिहासों के स्रष्टा
हमीं बनेंगे क्या ?
अखिल उत्पादन के अमर अधिकारी
विश्व राष्ट्रों के संग साभिमान
हमीं बढ़ेंगे क्या ?

('चुका भी हूँ नहीं मैं' से)

दुष्यन्त कुमार

पुराने पड़ गए डर, फेंक दो तुम भी,
ये कचरा आज बाहर फेंक दो तुम भी।

लपट आने लगी है, अब हवाओं में,
ओसारे और छप्पर फेंक दो तुम भी।

यहाँ मासूम सपने जी नहीं पाते
इन्हें कुंकुम लगाकर फेंक दो तुम भी।

तुम्हें भी इस बहाने याद कर लेंगे,
इधर दो चार पत्थर फेंक दो तुम भी।

ये मूरत बोल सकती है अगर चाहो,
अगर कुछ शब्द कुछ स्वर फेंक दो तुम भी।

किसी संवेदना के काम आएँगे,
यहाँ टूटे हुए पर फेंक दो तुम भी।

ये धुए का एक घेरा कि मैं जिसमें रह रहा हूँ,
मुझे किस कदर नया है, मैं जो दर्द सह रहा हूँ।

ये जमीन तप रही थी, ये मकान तप रहे थे,
तेरा इंतजार था जो मैं इसी जगह रहा हूँ।

मैं ठिठक गया था लेकिन तेरे साथ-साथ था मैं,
तू अगर नदी हुई तो मैं तेरी सतह रहा हूँ।

तेरे सर पे धूप आई तो दरख्त बन गया मैं,
तेरी जिंदगी में अक्सर मैं कोई वजह रहा हूँ।

कभी दिल में आरजू-सा कभी मुंह में बद्दुआ सा,
मुझे जिस तरह भी चाहा, मैं उसी तरह रहा हूँ।

मेरे दिल पे हाथ रक्खो, मेरी बेबसी को समझो
मैं इधर से बन रहा हूँ मैं उधर से ढह रहा हूँ।

यहाँ कौन देखता है, यहाँ कौन सोचता है,
कि ये बात क्या हुई है जो मैं शेर कह रहा हूँ।

आज सडकों पर लिखे हैं सैकडों नारे न देख,
घर अंधेरा देख तू, आकाश के तारे न देख ।

एक दरिया है यहाँ पर दूर तक फैला हुआ,
आज अपने बाजुओं को देख, पतवारें न देख ।

अब यकीनन ठोस है धरती हकीकत की तरह
यह हकीकत देख, लेकिन खौफ के मारे न देख ।

वे सहारे भी नहीं अब, जंग लडनी है तुझे,
कट चुके जो हाथ, उन हाथों में तलवारें न देख ।

दिल को बहला ले, इजाजत है, मगर इतना न उड,
रोज सपने देख, लेकिन इस कदर प्यारे न देख ।

ये धुंधलका है नजर का, तू महज मायूस है
रोजनों को देख दीवारों में दीवारें न देख ।

राख, कितनी राख है, चारों तरफ बिखरी हुई,
राख में चिनगारियाँ ही देख, अंगारे न देख ।

कही पे धूप की चादर बिछा के बैठ गए,
कहीं पे शाम सिरहाने लगाके बैठ गए।

जले जो रेत मे तलुवे तो हमने ये देखा,
बहुत से लोग वही छटपटा के बैठ गए।

खड़े हुए थे अलावो की आंच लेने को,
सब अपनी अपनी हथेली जलाके बैठ गए।

दुकानदार तो मेले मे लुट गए यारो !
तमाशबीन दुकानें लगाके बैठ गए।

लहू-लुहान नजारो का जिक्र आया तो,
शरीफ लोग उठे दूर जाके बैठ गए।

ये सोचकर कि दरख्तों मे छांव होती है,
यहां बबूल के साए मे आके बैठ गए।

भूख है तो सब्र कर, रोटी नही तो क्या हुआ,
आजकल दिल्ली में है ज़ेरे बहस ये मुद्दआ।

मौत ने तो धर दबोचा एक चीते की तरह,
जिंदगी ने जब छुआ तब फ़ासला रखकर छुआ।

गिड़गिड़ाने का यहां कोई असर होता नहीं,
पेट भरकर गालियाँ दो, आह भरकर बददुआ।

क्या वजह है प्यास ज़्यादा तेज लगती है यहाँ,
लोग कहते हैं कि पहले इस जगह पर था कुआँ।

आप दस्ताने पहनकर छू रहे हैं आग को,
आपके भी ख़ून का रंग हो गया है साँवला।

इस अँगीठी तक गली से कुछ हवा आने तो दो,
तब तलक खिलते नही, ये कोयले देंगे धुआँ।

दोस्त, अपने मुल्क की किस्मत पे रंजीदा न हो,
उनके हाथों में है पिंजरा, उनके पिंजरे में सुआ।

इस शहर में वो कोई बारात हो या वारदात,
अब किसी भी बात पर खुलती नहीं हैं खिड़कियाँ।

देख, दहलीज से काई नहीं जाने वाली,
ये खतरनाक सचाई नहीं जाने वाली ।

कितना अच्छा है कि सांसो की हवा लगती है,
आग अब उनसे बुझाई नही जाने वाली ।

एक तालाब सी भर जाती है हर बारिश मे,
मैं समझता हूँ ये ख्ाई नहीं जाने वाली ।

चीख निकली तो है होठो से, मगर मद्धम है,
बंद कमरो को सुनाई नही जाने वाली ।

तू परेशान बहुत है, तू परेशान न हो,
इन ख़ुदाओं की ख़ुदाई नहीं जाने वाली ।

आज सडको पे चले आओ तो दिल बहलेगा,
चन्द ग़ज़लों से तन्हाई नहीं जाने वाली ।

भूख है तो सब्र कर, रोटी नही तो क्या हुआ,
आजकल दिल्ली मे है, ज़ेरे बहस ये मुद्दआ ।

मौत ने तो धर दबोचा एक चीते की तरह,
जिदगी ने जब छुआ तब फासला रखकर छुआ ।

गिडगिडाने का यहा कोई असर होता नहीं,
पट भरकर गालियाँ दो, आह भरकर बददुआ ।

क्या वजह है प्यास ज़्यादा तेज लगती है यहाँ,
लोग कहते हैं कि पहले इस जगह पर था कुआँ ।

आप दस्ताने पहनकर छू रहे हैं आग को,
आपके भी खून का रग हो गया है सावला ।

इस अंगीठी तक गली से कुछ हवा आने तो दो,
जब तलक खिलते नही, ये कोयलें देंगे धुआं ।

दोस्त, अपने मुल्क की किस्मत पे रजीदा न हो,
उनके हाथों में है पिजरा, उनके पिजरे मे सुआ ।

इस शहर मे वो कोई बारात हो या वारदात,
अब किसी भी बात पर खुलती नही हैं खिडकियाँ ।

देख, दहलीज से काई नहीं जाने वाली,
ये खतरनाक सचाई नही जाने वाली ।

कितना अच्छा है कि सांसो की हवा लगती है,
आग अब उनसे बुझाई नही जाने वाली ।

एक तालाब सी भर जाती है हर बारिश मे,
मैं समझता हूं ये खाई नही जाने वाली ।

चीख निकली तो है होठो से, मगर मद्धम है,
बन्द कमरो को सुनाई नही जाने वाली ।

तू परेशान बहुत है, तू परेशान न हो,
इन खुदाओ की खुदाई नहीं जाने वाली ।

आज सड़को पे चले आओ तो दिल बहलेगा,
चन्द गजलों से तन्हाई नहीं जाने वाली ।

ये सारा जिस्म झुककर बोझ से दुहरा हुआ होगा,
मैं सजदे में नहीं था, आपको धोखा हुआ होगा।[1]

यहाँ तक आते-आते सूख जाती हैं कई नदियाँ,
मुझे मालूम है पानी कहाँ ठहरा हुआ होगा।

गजब ये है कि अपनी मौत की आहट नहीं सुनते,
वो सबके सब परीशाँ हैं वहाँ पर क्या हुआ होगा।

तुम्हारे शहर में ये शोर सुन-सुनकर तो लगता है,
कि इंसानों के जंगल में कोई हाँका हुआ होगा।

कई फाके बिताकर मर गया जो उसके बारे में,
वो सब कहते हैं अब, ऐसा नहीं, ऐसा हुआ होगा।

यहाँ तो सिर्फ गूँगे और बहरे लोग बसते हैं,
खुदा जाने यहाँ पर किस तरह जलसा हुआ होगा।

चलो, अब यादगारों की अँधेरी कोठरी खोलें,
कम-अज़-कम एक वो चेहरा तो पहचाना हुआ होगा।

रोज जब रात को बारह का गजर होता है,
यातनाओं के अँधेरे में सफर होता है।

कोई रहने की जगह है मेरे सपनों के लिए,
वो घरौंदा सही, मिट्टी का भी घर होता है।

सिर से सीने में कभी, पेट से पाँवों में कभी,
एक जगह हो तो कहें दर्द इधर होता है।

ऐसा लगता है कि उड़कर भी कहाँ पहुँचेंगे,
हाथ में जब कोई टूटा हुआ पर होता है।

सैर के वास्ते सड़कों पे निकल आते थे,
अब तो आकाश से पथराव का डर होता है।

जिंदगानी का कोई मकसद नहीं है,
एक भी कद आज आदमकद नही है।

राम जाने किस जगह होंगे कबूतर,
इस इमारत मे कोई गुम्बद नही है।

आपसे मिलकर हमे अक्सर लगा है,
हुस्न मे अब जज्बए अमजद नही है।

पेड पौधे हैं बहुत बौने तुम्हारे,
रास्तो में एक भी बरगद नही है।

मैकदे का रास्ता अब भी खुला है,
सिर्फ आमदरफ्त ही जायद नही है।

इस चमन को देखकर किसने कहा था,
एक पछी भी शायद यहाँ नहीं है।

वो निगाहें सलीब हैं,
हम बहुत बदनसीब हैं।

आइए आख मूंद लें,
ये नजारे अजीब हैं।

जिंदगी एक खेत है,
और सांसें जरीब हैं।

सिलसिले खत्म हो गए,
यार अब भी रकीब हैं।

हम कहीं के नहीं रहे,
घाट औ' घर करीब हैं।

आपने लौ छुई नहीं
आप कैसे अदीब हैं।

उफ नहीं की उजड़ गए,
लोग सचमुच गरीब हैं।

जिंदगानी
एक भी व

राम जाने
इस इमारत

आपसे मिल
हुस्न मे अब

पेड पौधे हैं
रास्तो में एव

मैकदे का रास्ता
सिफ आमदरफ्त

इस चमन को देख
एक पछी भी द

आज वीरान अपना घर देखा
तो कई बार झाक कर देखा।

पांव टूटे हुए नजर आए,
एक ठहरा हुआ सफर देखा।

होश मे आ गए कई सपने,
आज हमने वो खँडहर देखा।

रास्ता काटकर गई बिल्ली,
प्यार से रास्ता मगर देखा।

नालियो में हयात देखी है
गालियों में बड़ा असर देखा।

उस परिन्दे को चोट आई तो,
आपने एक-एक पर देखा।

हम खडे थे कि ये जमी होगी,
चल पडी तो इधर उधर देखा।

तुमको निहारता हूँ सुबह से ऋतम्बरा,
अब शाम हो रही है मगर मन नहीं भरा।

खरगोश बन के दौड़ रहे हैं तमाम ख्वाब,
फिरता है चाँदनी में कोई सच डरा डरा।

पौधे झुलस गये हैं मगर एक बात है,
मेरी नजर में अब भी चमन है हरा भरा।

लंबी सुरंग-सी है तेरी ज़िंदगी तो बोल,
मैं जिस जगह खड़ा हूँ वहाँ है कोई सिरा।

माथे पे रखके हाथ बहुत सोचते हो तुम,
गंगा कसम बताओ हमें क्या है माजरा।

आज वीरान अपना घर देखा
तो कई बार झाक कर देखा।

पाँव टूटे हुए नजर आए,
एक ठहरा हुआ सफर देखा।

होश मे आ गए कई सपने,
आज हमने वो खँडहर देखा।

रास्ता काटकर गई बिल्ली,
प्यार से रास्ता अगर देखा।

नालियो में हयात देखी है
गालियों में बडा असर देखा।

उस परिन्दे को चोट आई तो,
आपने एक-एक पर देखा।

हम खडे थे कि ये अभी होगी,
चल पडी तो इधर उधर देखा।

मरना लगा रहेगा यहाँ जी तो लीजिए,
ऐसा भी क्या परहेज़ ज़रा-सी तो लीजिए ।

अब रिन्द बच रहे हैं ज़रा तेज़ रक्स हो,
महफ़िल से उठ लिये हैं नमाज़ी तो लीजिए ।

पत्तों से चाहते हो बजें साज़ की तरह
पेड़ों से आप पहले उदासी तो लीजिए ।

ख़ामोश रह के तुमने हमारे सवाल पर
कर दी है शहर भर में मनादी तो लीजिए ।

ये रोशनी का दर्द ये सिहरन ये आरज़ू,
ये चीज़ ज़िंदगी में नहीं थी तो लीजिए ।

फिरता है कैसे-कैसे ख़याल के साथ वो,
उस आदमी की जामातलाशी तो लीजिए ।

हो गई है पीर पर्वत सी, पिघलनी चाहिए,
इस हिमालय से कोई गंगा निकलनी चाहिए।

आज यह दीवार, परदों की तरह हिलने लगी
शर्त लेकिन थी कि ये बुनियाद हिलनी चाहिए।

हर सड़क पर, हर गली में, हर नगर, हर गाँव में,
हाथ लहराते हुए हर लाश चलनी चाहिए।

सिर्फ हंगामा खड़ा करना मेरा मकसद नहीं,
मेरी कोशिश है कि ये सूरत बदलनी चाहिए।

मेरे सीने में नहीं तो तेरे सीने में सही,
हो कहीं भी आग, लेकिन आग जलनी चाहिए।

अपाहिज भ्रमा को वहन कर रहा हूँ,
तुम्हारी कहन थी, कहन कर रहा हूँ।

ये दरवाजा खोलो तो खुलता नहीं है,
इसे तोड़ने का जतन कर रहा हूँ।

अँधेरे में कुछ जिंदगी होम कर दी,
उजाले में अब ये हवन कर रहा हूँ।

वे सम्बन्ध अब तक अहस में टँगे हैं,
जिन्हें रात - दिन स्मरण कर रहा हूँ।

तुम्हारी थकन ने मुझे तोड़ डाला
तुम्हे क्या पता क्या सहन कर रहा हूँ।

मैं अहसास तक भर गया हूँ लबालब,
तेरे आँसुओं को नमन कर रहा हूँ।

समालोचकों की दुआ है कि मैं फिर,
सही शाम से आचमन कर रहा हूँ।

इस नदी की धार में ठंडी हवा आती तो है।
नाव जर्जर ही सही, लहरों से टकराती तो है।

एक चिनगारी कहीं से ढूंढ लाओ दोस्तो,
इस दिए में तेल से भीगी हुई बाती तो है।

एक खँडहर के हृदय-सी, एक जँगली फूल सी,
आदमी की पीर गूंगी ही सही, गाती तो है।

एक चादर साँझ ने सारे नगर पर डाल दी,
यह अँधेरे की सड़क उस भोर तक जाती तो है।

निर्वसन मैदान में लेटी हुई है जो नदी,
पत्थरों से, ओट में, जा जाके बतियाती तो है।

दुख नहीं कोई कि अब उपलब्धियों के नाम पर,
और कुछ हो या न हो, आकाश सी छाती तो है।

कैसे मंजर सामने आने लगे हैं,
गाते गाते लोग चिल्लाने लगे हैं।

अब तो इस तालाब का पानी बदल दो
ये कँवल के फूल कुम्हलाने लगे हैं।

वो सलीबों के करीब आए तो हमको
कायदे कानून समझाने लगे हैं।

एक कब्रिस्तान मे घर मिल रहा है,
जिसमे तहखानो से तहखाने लगे हैं।

मछलियो मे खलबली है, अब सफीने,
उस तरफ जाने से कतराने लगे हैं।

मौलवी से डाट खाकर अहले मकतब,
फिर उस आयत को दोहराने लगे हैं।

अब नई तहजीब के पेशे-नजर हम,
आदमी को भूनकर खाने लगे हैं।

फिर धीरे धीरे यहा का मौसम बदलने लगा है
वातावरण सो रहा था अब आँख मलने लगा है।

पिछले सफर की न पूछो, टूटा हुआ एक रथ है,
जो रुक गया था कही पर, फिर साथ चलने लगा है।

हमको पता भी नही था, वो आग ठडी पडी थी
जिस आग पर आज पानी सहसा उबलने लगा है।

जो आदमी मर चुके थे, मौजूद हैं इस सभा मे,
हर एक सच कल्पना से आगे निकलने लगा है।

ये घोषणा हो चुकी है, मेला लगेगा यहा पर,
हर आदमी घर पहुँचकर, कपडे बदलने लगा है।

बातें बहुत हो रही हैं, मेरे तुम्हारे विषय मे,
जो रास्ते में खडा था पवत पिघलने लगा है।

घटियो की गूँज कानो तक पहुँचती है,
इक नदी जैसे दहानो तक पहुँचती है।

अब इसे क्या नाम दें ये बेल देखो तो,
कल उगी थी आज शानो तक पहुँचती है।

खिड़कियाँ नाचीज गलियो से मुखातिब हैं,
अब लपट शायद मकानो तक पहुँचती है।

आशियाने को सजाओ तो समझ लेना,
बर्क कैसे आशियानो तक पहुँचती है।

तुम हमेशा बदहवासी में गुजरते हो,
बात अपनो से बिरानो तक पहुँचती है।

सिर्फ आँखें ही बची हैं चन्द चेहरो में,
बेजुबाँ सूरत जुबानो तक पहुँचती है।

अब मुअज्जन की सदाएँ कौन सुनता है
चीख चिल्लाहट अजानो तक पहुँचती है।

एक कबूतर, चिट्ठी लेकर, पहली पहली बार उड़ा
मौसम एक गुलेल लिये था पट से नीचे आन गिरा।

बंजर धरती झुलसे पौधे, बिखरे काँटे, तेज़ हवा
हमने घर बैठे-बैठे ही सारा मंज़र देख लिया।

चट्टानों पर खड़ा हुआ तो छाप रह गई पाँवों की,
सोचो कितना बोझ उठाकर मैं इन राहों से गुज़रा।

सहने को हो गया इकट्ठा इतना सारा दुख मन में,
कहने को हो गया कि देखो अब मैं तुमको भूल गया।

धीरे धीरे भीग रही हैं सारी ईंटें पानी में,
इनको क्या मालूम कि आगे चलकर इनका क्या होगा।

('साये में धूप' से)

शब्दार्थ-टिप्पणी

योगीन्दुदेव

1 विभिण्णउ-भिन्न । परमप्पु परम+अप्पु-परमात्मा । पंडिउ-पंडित (ज्ञानी)

अर्थ—जो देह से भिन्न परम समाधि में ठहरे हुए परम आत्मा को जानता है, वही जाग्रत (ज्ञानी) होता है ।

2 कोहु-क्रोध । मउ-मद । माणु-मान । ठाणु-स्थान । झाणु-ध्यान । णिरंजनु-निरंजन ।

अर्थ—जिसमें न क्रोध, न मोह, न मद, न माया, न मान, है तथा जिसका न कोई (विशेष) स्थान तथा ध्यान (स्वरूप) है, वही निरंजन (निष्कलंक) आत्मा है ।

3 वि-भी । णवि-नहीं । छिवइ-छूता है । णियमें-अनिवार्यत ।

अर्थ—जो देह में रहता हुआ भी अनिवार्यत देह को भी बिल्कुल ही नहीं छूता तथा जो देह के द्वारा भी नहीं छुआ जाता है, वह परमात्मा है ।

4 परिट्ठियह्-स्थित । फुडु-वास्तविक रूप से ।

अर्थ—समता भाव में ठहरे हुए योगियों के (हृदय से) परमानंद उत्पन्न करता हुआ जो कुछ प्रकट होता है, उसे ही परमात्मा समझो ।

5 अत्थि-है । विसाउ-विषाद ।

अर्थ—जिसमें न पुण्य है, न पाप न हर्ष, न विषाद तथा जिसमें एक भी दोष नहीं है वही अवस्था निर्दोष (सहज) है ।

6 म-मत । लक्खणा-लक्षण । परु-पर, दूसरा । भणमि-कहता हूँ । मुणि-मनुष्य । भेउ-भेद ।

अर्थ—हे मनुष्य जीव (आत्मा) और अजीव (अनात्मा) को एक मत समझ । इनमें लक्षण भेद है । अभेदरूप आत्मा को जान और जो इससे अन्य है वह अन्य ही है (ऐसा) मैं कहता हूँ ।

7 पेक्खिवि-देखकर । मा-मत । बंभु-ब्रह्म ।

अर्थ—हे जीव देह के जरा मरण को देखकर तू भयभीत मत हो । आत्मा जरा और मृत्यु से रहित परम ब्रह्म है, ऐसा जान ।

8 सम्मादिटठि–सम्यक दृष्टि । कम्मई–कर्मों से । लहु–शीघ्र । मुच्चई
हो जाता है ।

अर्थ–आत्मा से आत्मा को जानता हुआ व्यक्ति सम्यकदृष्टि (ज्ञानी) हो
ऐसा व्यक्ति शीघ्र कर्मों से छुटकारा पा जाता है ।

9 भिमिण्णउ वण्णु–विभिन्न वर्ण । चितक–बुरा रंग । भण्णु–समझो ।
तणु–दुबल । थूल–स्थूल ।

अर्थ–मैं गोरा हूँ, काला हूँ, चितकबरे रंग का हूँ । पतले शरीर वाला हूँ,
शरीर वाला हूँ, ऐसा सोचने वाले को मूढ समझो ।

10 लहेविणु–पाकर । गलेइ–नष्ट होता है । जिमु जिमु–जैसे जैसे । जो
योगी (साधक) ।

अर्थ–हे साधक, जैसे जैसे मोह नष्ट होता वैसे-वैसे समय पाकर मनुष्य
जागृति (पूर्णज्ञान) को प्राप्त करता है । (इस तरह मनुष्य) अनि
आत्मा को जान लेता है ।

11 णिम्मलउ–निर्मल । सत्थ पुराण हूँ–शास्त्र पुराण । तव चरणु–तप
(तपस्या) । कि–क्या ।

अर्थ–जिनके निज मन में निर्मल आत्मा अनिवार्यतः नहीं बसता है उनके
शास्त्र पुराण (का ज्ञान) तथा तपस्या मोक्ष प्रदान कर सकते हैं ?
नहीं ।

12 राएँ–राग । हियवडए–हृदय । दप्पणि–दर्पण । मइलए–मलिन ।
प्रतिबिंब ।

अर्थ–जैसे मल दर्पण से प्रतिबिंब नहीं दिखाई देता है वैसे ही राग (प्रा
रंगे हुए हृदय में समत्वयुक्त आत्मा नहीं दिखाई देता है । यह संदेह
है, इसे समझ ।

15 देउले–देवालय (मन्दिर) सिलए-शिला (पत्थर) । लिप्पइ–मूर्ति ।
चित्र । अक्खउ–अखण्ड । णाणमउ–ज्ञानमय । सिवु–शिव (मंगलमय) ।

अर्थ–परमात्मा न मन्दिर में है, न पत्थर में, न (गढ़ी हुई) मूर्ति में, न चि
अखंड निरंजन ज्ञानमय तथा मंगलमय आत्मा समत्व भावना से युक्त
में बसा हुआ है ।

14 जाणवि–जानकर । मण्णवि–समझकर । भावडउ–भाव । चरणु–आच

15 जांवइ–जब तक । उपसमई–शांत रहता है । सजदु–संयमी । कसायह–कषाय (मनोविकार) ।

अर्थ—ज्ञानी तब तक शान्त चित्त रहता है जब तक वह संयमी (जितेन्द्रिय) बना रहता है। कषायों (मनोविकारों) के वश मे गया हुआ जीव असंयमी हो जाता है।

16 णाण–ज्ञान । विहीणहँ–विहीन । बहुऍ–बहुत । विरोलियई–बिलोडन । चोप्पडउ–चिकना ।

अर्थ—हे जीव, ज्ञान विहीन व्यक्ति के लिए तू मोक्ष (परम शांति) की स्थिति को मत मान। बहुत मथे हुए पानी के द्वारा हाथ चिकना नही होता है।

17 भुंजतु–भोगता हुआ । पुणु–पुन (फिर) संचिउ–संचित ।

अर्थ—अपने कर्म फल को भोगते हुए भी जो उसमे आसक्त नही होता उसे कर्म फिर नही बाँधता और उसके संचित कर्म भी नष्ट हो जाते हैं।

18 राय रोस–रागद्वेष । परिट्ठिया–स्थित । परिहरिवि–त्याग कर ।

अर्थ—राग द्वेष को छोड कर जो जीवो को समान दृष्टि से देखते हैं वे सम भाव मे स्थित हुए निर्वाण (परम शांति) प्राप्त करते हैं।

19 भल्लाह–भले लोग । णासंति–नष्ट हो जाते हैं । खलेंहि–दुष्ट । वइसाणरु–वडवानगर (अग्नि) । लोहहँ–लोहा । घणेंहि–हथौडों से ।

अर्थ—दुष्टों के संसग से भले लोगों के गुण भी नष्ट हो जाते हैं। (ठीक ही है) लोहे के साथ मिली हुई अग्नि हथौडो से पीटी जाती है।

20 वत्थि–वस्त्र । जिण्णु–जीर्ण ।

अर्थ—जिस प्रकार ज्ञानी जीर्ण वस्त्र (धारण करने) से देह को जीर्ण नही मानता उसी प्रकार क्षीण देह से आत्मा को क्षीण नही मानता।

21 णाणि–ज्ञानी ।

अर्थ—हे जीव जिस प्रकार ज्ञानी वस्त्र को देह से भिन्न मानता है उसी प्रकार आत्मा से देह को अलग ही मानता है।

22 ति पयारो–तीन प्रकार । णिमंतु–नि संदेह ।

अर्थ—आत्मा तीन प्रकार की होती है —परम आत्मा (पूर्ण आत्मा) अंतरात्मा (जाग्रत आत्मा) और बहिरात्मा (मूर्छित आत्मा)। तू नि संदेह बहिरात्मा को छोड कर अन्तरात्मा के द्वारा परम आत्मा को प्राप्त कर।

23 मिच्छा–मूर्छा । मुणेइ– जानता है । भमेइ–चक्कर काटता है ।

अर्थ – मूर्छा (अज्ञान) से मूढ बना हुआ व्यक्ति परम आत्मा को नही जानता। जिसे जितेंद्रिय व्यक्तियों द्वारा बहिरात्मा कहा गया है वह निश्चय ही संसार मे चक्कर काटता है।

24 गिहि-वावार--गृह व्यापार (गृहस्थ के काय)। हेयाहेउ--त्याज्य अत्याज्य (त्याग करने योग्य व ग्रहण करने योग्य) अणुदिनु--अनुदिन। झायहिं---ध्यान करते हैं। लहु---शीघ्र।

अर्थ---गृहस्थ के कार्यों मे लगे हुए (भी) जो त्याज्य और ग्राह्य (बातो) को समझते हैं तथा प्रतिदिन जितेंद्रिय दिव्य आत्मा का ध्यान करते हैं वे शीघ्र निर्वाण प्राप्त करते हैं।

25 लिप्पियइ--लिप्त होता है। कया वि--कदापि (कभी भी) अप्प सहावि--आत्म स्वभाव।

अर्थ---जिस प्रकार कमल पत्र जल से कभी भी लिप्त नहीं होता उसी प्रकार आत्म स्वभाव रमण करने वाला (व्यक्ति) कर्मों (कर्मफल) से लिप्त नही होता।

26 रोस--क्रोध या द्वेष। सामाइउ--(रागद्वेष रहित) समभाव। केवलि--मुक्ति का अधिकारी साधु। एम--इस प्रकार।

अर्थ---आसक्ति और क्रोध दोनो को छोड़कर जो समभाव का अनुभव करता है, उसे साम्यावस्था मे समझो, इस प्रकार वह केवली (मुक्ति का अधिकारी) है।

15 जावइ—जब तक । उपसमई—शात रहता है । सजदु—सयम कषाय (मनोविकार) ।

अथ—ज्ञानी तब तक शात चित्त रहता है जब तक वह सयमी (' रहता है । कषायो (मनोविकारो) के वश मे गया हुआ जी जाता है ।

16 णाण—ज्ञान । विहीणहँ—विहीन । बहुएँ—बहुत । विरोलि चोप्पडउ—चिकना ।

अथ—हे जीव, ज्ञान विहीन व्यक्ति के लिए तू मोक्ष (परम शांति मत मान । बहुत मथे हुए पानी के द्वारा हाथ चिकना नही

17 भुजतु—भोगता हुआ । पुणु—पुन (फिर) सचिउ—सचित ।

अथ—अपने कम फल को भोगते हुए भी जो उसमे आसक्त नह फिर नहीं बाधता और उसके सचित कम भी नष्ट हो जा

18 राय दोस—रागद्वेष । परिट्ठिया—स्थित । परिहरिवि—त्याग

अथ—राग-द्वेष को छोड कर जो जीवो को समान दृष्टि से दे मे स्थित हुए निर्वाण (परम शाति) प्राप्त करते हैं ।

19 भल्लाह—भले लोग । णासति—नष्ट हो जाते हैं । सलेहि- वइसानरु (अग्नि) । लोहहँ—लोहा । घणेंहि—हथोडों स

अथ—दुष्टो के ससग से भले लोगो के गुण भी नष्ट हो जा लोहे के साथ मिली हुई अग्नि हथोडो से पीटी जाती है

20 वत्थि—वस्त्र । जिण्णु—जीण ।

अथ—जिस प्रकार ज्ञानी जीण वस्त्र (धारण करने) से देह उसी प्रकार क्षीण देह से आत्मा को क्षीण नही मानता

21 णाणि—ज्ञानी ।

अथ—हे जीव जिस प्रकार ज्ञानी वस्त्र को देह से भिन्न आत्मा से देह को अलग ही मानता है ।

22 ति पयारो—तीन प्रकार । णिभतु—नि सदेह ।

अथ—आत्मा तीन प्रकार की होती है —परम आत्मा ((जाग्रत आत्मा) और बहिरात्मा (मूर्छित आत्मा) । को छोड कर अन्तरात्मा के द्वारा परम आत्मा को प्रा

23 मिच्छा—मूर्छा । मुणेइ— जानता है । भमेइ—चक्कर क

अथ - मूर्छा (अज्ञान) स मूढ बना हुआ व्यक्ति परम आ जिस जितेन्द्रिय व्यक्तियो द्वारा बहिरात्मा कहा ससार मे चक्कर काटता है ।

दोहावली

6 सुतरु–कपास । टकिका–टाँकी । रुखाम–रुखानी (बढइयो का लोहे का एक औजार) । सासति–कष्ट ।

11 कदरी–केला । बदरी–बेर । पनस–कटहल ।

12 मगह–मगध । गया–एक तीर्थ का नाम (तथा गया बीता) ।

15 गादुर–चमगादड़ । 18 मोटी रोटी मारु–रोटी की मोटी मार मारो । (पेट भर खिलाकर उसे वश मे करो) । 24 पाहुी खेती–जिस गाव मे रहते हो उससे दूर जाकर दूसरे गाव मे खेती करना । लगन–आसक्ति । बट–राहगीर । मग–रास्ते पर ।

25 रीझि–प्रेम । खीझि–रोष ।

26 करषत–खीचता है ।

तुलसीदास

गीतावली

1 फरनि–फल । लरनि–प्रतिद्वंद्विता, होड़ । लरखरनि–लड़खड़ाना ।

2 कधर–कंधे । उपवीत–यज्ञोपवीत ।

3 *सुखमा दही–कामदेव रूपी ग्वाले ने शोभा रूपी सुरभि से शृंगार* रूपी दूध दुहकर जो अमृतमय दही तैयार किया था । मथि माखन महीरी–उसे मथकर ही मक्खन रूप राम और सीता रचे हैं तथा सारे लोकों की शोभा उस बचा हुआ मट्ठा है ।

4 अगहुड़–आगे बढ़ने के लिए उतावला । गड़त गौड पक–पर मानो सकोच रूप दलदल में गड़े जाते हैं । फनिक–साप ।

5 गौन–अप्रधान, महत्त्वहीन । आरत–आरति–दीन–दुःखी का कष्ट दूर करने वाले ।

6 कीर–तोता । छति-लाहु–हानि लाभ । खीर नीर–दूध-पानी ।

वैराग्य-सदीपनी

5 बिलाहिं–नष्ट हो जाते हैं । 11 मसि–स्याही । 14 चाम–चमड़ा । 15 सुपच–श्वपच, (निम्न जाति का व्यक्ति) ।

जानकी मगल

1 बनज–कमल । 2 कौसिक–विश्वामित्र । 4 दसकंधर–रावण । 5 कुभज–अगस्त्य मुनि । 13 करज–कमल । 15 बिबुध–देवता ।

कवितावली

1 मघवा–इन्द्र । लोमम–लोमस–ऋषि । 2 अयानी–मूर्ख । 3 सुठि–अत्यन्त सुंदर 6 पनही–जूता ।

बरवै रामायण

2 मख–यज्ञ । 4 कोल–एक जंगली जाति भील । कलस-जोनि–अगस्त्य ऋषि ।

दोहावली

6 सुतरु–कपास । टकिका–टाँकी । रुखाम–रुखानी (बढइयो का लोहे का एक औजार) । सासति–कष्ट ।

11 कदरी–केला । बदरी–बेर । पनस–कटहल ।

12 मगह–मगध । गया–एक तीर्थ का नाम (तथा गया बीता) ।

15 गादुर–चमकादड । 18 मोटी रोटी मारु–राटी की मोटी मार मारो । (पेट भर खिलाकर उसे वश मे करा) । 24 पाहू खेती–जिस गाव मे रहते हो उससे दूर जाकर दूसरे गाव मे खेती करना । लगन–आसक्ति । बट–राहगीर । मग–रास्त पर ।

25 रीझि–प्रेम । खीझि–राव ।

26 करषत–खीचता है ।

रसखान

भक्ति 1 पुरंदर–इन्द्र । कालिंदी–यमुना नदी । 3 कलधौत–सोना चांदी । 6 छाज–छाजन, सूप । उछिया–छांछ (मटठा) नापने या रखने का बर्तन ।

वनलीला 8 मार–कामदेव । गोरस लीला 9 वारही–इस पर । मौंडी–लड़की । भतराड–मथुरा व दावन के बीच का एक स्थान । कनौडी–वशीभूत (कृतज्ञ) । डौंडी–मुनादी । दधिदान 11 भाजन–बर्तन । सौ–सौगंध । मरु करि–कठिनाई से । उलाहना 12 मेव–लूटमार करने वाली जाति विशेष । मिलन 16 बक–तिरछी । वंशी 21 वनितानि–स्त्रियां । हांसुरी–हँसी । 22 पवांरो–दूर हटाना । 23 ढारी–ढंग । जमकाल–मृत्यु । 24 मन–कामदेव । भ्रमरगीत 31 गारुड–गारुडी, सांप का जहर उतारने वाला । कारे बिसारे–विष वाला काला सर्प । 34 भेती–होती । बकोटती–नाखूनों से नोचना । रिझावन को–रिझाने का ।

दानलीला 36 भुरही तें–प्रात काल से ही/अरुझत–झगडते हो । मीरखान–उच्च अधिकारी । 38 मवासी–किलेदार, नायक । 40 बादी–झगडालू । फसादी–झगडा करने वाला । साट खाह–दूसरों का धन लूटना । भागी–अभ्यस्त । 41 नियाव–न्याय । राव–राजा ।

प्रेम 12. अहमिति–अहंकार ।

सुन्दरदास

गुरु महिमा

1–4 घात–अहित । ससेइ–संशय । प्रसाद–प्रसन्नता (कृपा) ।

उपदेश

5–6 मोट–गठरी । वाम–पत्नी ।

काल की विकरालता

7–11 बिलायत–नष्ट होना । दमामा–नगाड़ा । छेहा–अंत । खेहा–धूल, राख । निहचै–निश्चय । निरंजन–निराकार ब्रह्म । धामस धूमस–धूम धाम (संसार का जंजाल) ।

देह एवं जगत की नश्वरता

12–13 करतार–जगत् का कर्त्ता, ईश्वर । अभावनो–अप्रिय । नन्दन–पुत्र । हाथ मे धोरा लया–सफेद वस्त्र धारण किए ।

आशा तृष्णा

14–16 बिल्लात–विलाप करना । कबौ–कभी । ग्रन–ग्रन्थ ।

आश्वासन

17–19 पाहन–कुछ नही खाक (लाक्षणिक अर्थ) पाहन मे पहुँचाय धरैगो–नष्ट कर देगा ।

विश्वास

20–21 खेचर–पक्षी । पोखे–पालन पोषण करता है । तोख–सन्तुष्ट । औगे–दु खी, उदास ।

मूखता

24–26 कौरी–चीटी । मरीचिक–किरण ।

वाणी का महत्त्व

चार पदारथ–धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष । आठहु सिद्धि–आठ सिद्धियाँ । अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशित्व वशित्व । नवौनिधि–कुबेर की नौ निधियाँ । पद्म, महापद्म, शंख मकर, कच्छप मुकुन्द, कुन्द, नील, खर्व ।

पद्माकर

भक्ति

थिर—स्थिर । कदर—गुफा । अकारथ—व्यर्थ, बिना किसी काम के । बैस—उमर दुरास—दुराशा (न पूरी होने वाली आशा) । कायो—शरीर । चौरे—चारो ओर से । लागि—के लिए, लगकर । दीह—दीघ, बडे बडे । द्योस—दिन । पिपीलिका—चिऊटी । फील—हाथी । तन—तनय, पुत्र । कलाम—वचन, प्रार्थना पुकार । खोरिन—तग गलियों म । दुरौ—छिप जाओ । आडा—आड म, बीच म हो गया है । रच—प्रल्प, स्वल्प । नेक-नेक—न्हे-न्हे । ईंडुरी—घडा रखने के लिए सिर पर रखा हुआ कपडे का वतुलाकार मेडरा (ईंनू बिन्ना) । मलार—एक राग का नाम । फाग—होली । नाय—उडेलकर, गिराकर । अबीर—गुलाल, लाल रग की बुक्नी । रोरी—रोरी, लाल रग का चूरा या बुक्नी जिसका तिलक भी लगाते हैं । बिहृद—बेहद, बहुत, असीम, अधिक । स्यौरी—शबरी भीलनी (रामजा ने जिसके बेर खाए थे) गौतमतिया—गौतम की पत्नी, अहल्या धना—ध ना नाम का एक जाट भक्त । सदना—इस नाम का एक ईश्वर भक्त कसाई जिसका भगवान ने उद्धार किया । हाथी—गजराज । साधन—साधु लाग, भक्त लाग । सबरी—शबरी, भीलनी जिसके बेर भगवान राम ने प्रेम स खाये थे । वेद भेद—वेद का रहस्य । सुमृत—स्मृतिग्र थ । ठहराव—निश्चित किया है, ठहराया है । जमूनन—दूतो से । कामगया—कामधेनु, स्वग की एक गौ जो सब कामनाओ को पूरा करती है । कठवति—सूखकर कडा हो जाना । आइबो—आने को, आने योग्य । पाइबा—प्राप्त करने योग्य, प्राप्तव्य । नैन मु दे पै—आँख ब द होने पर, (मर जाने पर) । जकि-सी—विस्मित भोचक्की सी । काया—शरीर । मीच—मृत्यु मौत । चेत—सावधान होना हाश सम्भालना, बोध होना । बिसासिनी—विश्वासघातिनी । बिलई—प्रलय मौत । प्रयास—यत्न परिश्रम । लीकि—लीक, लकीर, भाग्यरेखा । बघम्बर—मगछाला । दिगम्बर—नगा । दूब-दूर्वा घास । पचपावक—पचाग्नि । साहस—हौसला, उत्साह । बणु—बासुरी । सलीती—थमी । छीजी—क्षीण हुई नष्ट हुई । रेनु—बालू रेत । भीती—दीवार । रीती—रिक्त, खाली । खलीती—खरीता, चमडे का थला, जेब बटुआ । छन भगुर—क्षण भर मे नष्ट हो जाने वाला । करोरा—कटोरा । ती—तिया स्त्री पत्नी । गोती—सगोत्री रिश्तेदार ।

प्रकृति वणन

लरजत—हिलते हैं । बिसासी—छली, कपटी विश्वासघाती । पगत—पगना । वीथिन—गलियों से । बगरो—छाया हुआ, विस्तीर्ण, व्यापक । ववेलिया—कोयल । मारुत—वायु । नादत—शब्द करती है । दररे—धक्के, तेजी से आगे ढकेलना ।

वीर रस

सीम–सीमा । समर–युद्ध । फलका—आकाश तारी–ताली । तमका–तमतमाहट, तीव्रता, क्रोध की तेजी, जोश । जाहिर–प्रकट । रौदा–धनुष की डोरी । सिलाही—सैनिक, कवच पहने हुए सिपाही । ऐल—इलाका, प्रदेश । निसान–युद्धपताका, नगाड़ा । पाकसासन—इन्द्र (उत्तर दिशा) । बिहाली–फिर से नई आभा, ताजगी ।

दानवीर

सुहेम—सुवर्ण । गिरिजा—पार्वती । गजानन—गणेश । गोई–छिपाकर । बितुंड–हाथी ।

गंगा स्तवन

विधि—ब्रह्मा । गिरिस—शिव । अघहर—पापनाशक । छेम—क्षेम, कल्याण । सुरसिंधु—गंगा । राका–पूर्णिमा की रात । पताका—झण्डी । भौन–भवन, घर । रावरे–आपके । बिन छारे—क्षरण किए बिना, बिना सुखाए । पापपुंज–पाप समूह । नभ—आकाश ।

गौतमतिया

अहल्या गौतम ऋषि की पत्नी थी, जिसे इन्द्र के दुराचार के कारण एवं गौतम के शाप के कारण पत्थर बनना पड़ा था । इस अहल्या का उद्धार श्री रामचन्द्रजी के चरणों की धूल के स्पर्श के कारण हो गया था ।

सूर्यमल्ल मिश्रण

1 विमुहा—विमुख । वघवाव—बाघ की गध ।

2 की—क्या । छक पगाम—बल मे मस्त ।

3 हाथल—हस्त प्रहार । भ्राहणे—मार डालता है ।

4 भ्रवट—भ्रायु । केहा—क्रमा । जेथ—जहा ।

5 गयन्द—गजेन्द्र । गवय—गैंडा । गिडराज—शूकरराज । सालडा—मुस्तद । मड—मचा रहे हैं ।

6 डोहैं—ध्वस कर रहे हैं । द्रह—जलाशय । ऊँडा—गहरा । दीह—दीघ । सीहरण—सिहनी । सहल—सर । सक्क—शायद ।

7 तु डा—मुख के भ्रग्रभाग से । हेकण—भ्रकेला । घू दिया—रौंद डाला । पाथर—बिस्तर ।

8 पाठडा—सूभ्रर के नौजवान बच्चे । कवला—सूभ्रर । भाडा भाडा-तितर बितर ।

9 सुहडा—सुभट । सिकारसी—सिकार कर लेंगे । भाजसी—तोड डालगा ।

10 पाधरो—सीधा । पू गी—सपेरा का वाद्ययन्त्र ।

11 घवल—बल । पयत—करता है । भ्रावगो—सपूरण ।

12 करवाल—तलवार । डाहुजहिया—बजने पर । जबाल—नगाडे ।

13 शाकल—शृ खला । जिके—जो । घाल—डालते हैं ।

14 पाख—बिना । दुमनो—उदास ।

15 बाढ—काट डालता है । पौढे—सोता है ।

16 बाजी—कहलाभ्रो । हाथस—हाथ का पजा । पाड—नष्ट कर देता है ।

17 सारखा—समान । विण्ठा—नष्ट हो गये ।

18 भ्रेस—भ्रायु । अजका—चचल उद्धत ।

19 छाटी—कीर्ति । नेप—वद्धि पर है । कोही—किसी ने ही ।

20 भ्राण—लाते हैं । कुबगा—शत्रुभ्रो को ।

21 पटल—छत । भ्रपणाय—अपना सकता है । किसौ—कौन, कौनसा ।

22 ठीणो—चपालन । ईखो—देखो । सूरी महल—वीर महिला ।

23 सहणी—सहन करने वाली । लजाण—लज्जित करने वाला ।

24 भ्रूण—गर्भ को । साव—बच्चा । वाढण री—काटने की ।

25 जाचा—जच्चाओ । हद—के । तापण—तापने की अगीठी ।

26 सलूणो—नमक सहित । समप्प—समर्पित करते हैं ।

27 साखल घीठा—शृंखला से खुले हुए । बीर जमीरा—भूमडल के अद्वितीय वीर ।

28 इला—पृथ्वी । पालण—पलने मे । हालरिया—झूले के गीत ।

29 थण—स्तन । छोल—दर । थिया—हुआ । बाला—हे पुत्र ।

30 काय—क्या । बलेबा—जलने के लिए । मरेबा—मरने के लिए ।

31 अमण—कहती है । धार—विचार करके । बलण—सती होना ।

32 धारा—तलवारो की धारा से । डूगर—पर्वत ।

33 नैंह—नही । वास—निवास ।

34 आलगसी—सुहावना । सुणिया—सुनने पर । सार वागी—तलवार बजी ।

35 सौक—सपत्नी । लगाड—लगाव । भला—अच्छी तरह ।

36 नथी—नही । मुडिया—युद्ध से पीठ दिखाने पर । गींदवो—तकिया ।

37 पूजाणो—पूजित । मीडाणो—मर्दन किया हुआ । बीजाणो—दुलाया हुआ । घण—अधिक ।

38 दुरग—किला । कढणो—निकसना ।

39 बलण—सती होना । बणे—हो । ब—उस । बणो—बनो ।

40 माड—महावर लगा । धारा लागीज—तलवार के घाट उतरे ।

41 पाछ्टू—फोड डालू । रावत—सरदार । जाम—लडकी ।

42 लकाल—सिंह । लहै—प्राप्त करता है ।

43 ओहड—पीछे हटते है । बिचाल—बीच । बटक—दातो से काटता है । मायड—माता । पूचा—कलाइयो का ।

44 प्राणा गाहक—प्राणो के ग्राहक, अर्थात् शत्रु । कसियो—कटिबद्ध ।

45 बाहुड—वापिस ले लिए जाते हैं । जठ—जहा ।

46 माहिरो—भात भरने की रस्म । कडूब—कुटुम्ब । वू ब—हाय तोबा ।

47 एथ—यहा । जणे—उत्पन्न करती है ।

48, देव—देखने । कीध—किया । कीस—कसे ।

49 टाट—दरिद्रता के कारण टोटे स। सरकी—सरकंडो की बनी हुई। मघपतिया–राजाओं के।

50 इसड–ऐस। टोटे–नुकसान पर। जणी मे–जिसमे। पोत—कंठाभरण।

51 विलस–विलास करते हैं। गामा—कीमत से।

52 बीजड–तलवार। माहे–पकडकर। ग्रत्थ—ग्रथ, लिये।

53 मोड—सहरा। पडव–शयनागार। छिपारिया—छिपाते समय।

54 गोरण दिन–विवाह के दूसरे दिन। बागा–बजे। उसीसी—तकिया।

55 काय–क्या। चीत चिंतन करता हूँ।

56 डाहल–शाखा। छागसी–काट डालेंगे। लॉत–रुचि। छकियो—मदमस्त।

57 वाटडी—राह। पडव–रगमहल। मावगो—संपूर्ण।

58 एकण–एक। दूणाडूण–दुगुना।

59 बरडाय–प्रलाप करता है।

60 जक–विश्राम। चउत्थ—चौथे।

61 बाभी—भाभी। चवातो—चूते हुए। बबाल—युद्ध का नगाडा।

62 कुरल—चीढाती है। धीरपिया—धय। दीहर—दिनका।

63 बाड–घर के पास। वासडा–निवास।

64 तूझ–तुम्हारा। पडिया पहली–गिरने से पहले।

65 घर बसाविया–घर मोल ले लिये। धाड लूब–आक्रमण होते हैं। हेली–सखी।

66 ओछाड ढक गया है। वाहू–घोडा। बींद–वर। गयण–आकाश।

67 बिसासतो–धीरज बँधाता हुआ। बेग–चाल। बाज–घोडा।

68 सौकरडा–बाणो की बोछार। प्रमाण–तरह। ढाहण–गिराने वाले।

69 सिखावियो–सिखलाया। ओज–बल कौशल।

70 सपेखे–देखे। गलबत्थामार–गाढालिंगन करके। बाहण–वार करने के लिए। बाल्हा–प्रिय।

71 दरजा–दरारें। झाट–प्रहार। अरराट–घोर भयंकरव।

72 दुमका–धमाका। मचकाय–मचक रही है।

73 जेज–देर। कटका–सेनाओ का। ढाहि–नष्ट करके।

74 पल–मास को। वाल्हे–प्यारे। देसी–देगा। धपाय–तृप्त कर।

75 फील–हाथी। हेके–एक साथ। धपावही–तृप्त करेंगे।

76 ग्राखता–उन्तावला । बहोड–वापिस लेकर ।

77 धव–पति । मारखौ–समान । ग्रनड–उद्धत । डोहै–विलोडित करता है ।

78 क्रजको–उद्धत–वचन । बाग–लगाम ।

79 थटिया–डटे हुए । केम–कैसे । दु भात–पंक्ति भेद भिन्न बर्ताव ।

80 धजर ग्राणें–शेखी बघारते है । ग्राण–लाते हैं ।

81 मूझ–मुझे । विग–माथ बिना मस्तक के ।

82 मच–पलग । मावतो–समाता ।

83 करडी–कठोर । कुचनू–स्तन को । हैदो–का । चोल–ग्रानद विहार का समय । धमरोल–प्रहारो की वर्षा ।

84 वर वर–भली भली, बार बार ।

85 ग्रोहणो–रोको । सच–सचय कर ।

86 ग्राटा–वर । सार–धम । भियण–लेने के लिए ।

87 दायणा–शत्रुग्रो पर । हलो–देखा ।

88 पार रा–शत्रुग्रो के । खिण–क्षणभर । सिखडी–महाभारत का कायर पात्र, मोर । जाण–मानो ।

89 लू बिया–झुके हुए । मजाय दीधा–भगा दिये । ऊठे–उठ कर ।

90 घर–रखलो । सुधाम–यथास्थान । पावा हूत–चरणो मे बरज–ब द कर दो ।

शमशेर बहादुर सिंह

सींग और नाखून   बख्तर–कवच।

गजल 1 मजमून–लेख आदि का विषय।

गजल 2 हकीकत–यथार्थ। तखय्युल–कल्पना। कम निगाही–उपेक्षा। दस्तूरे–फिरदौस–स्वगिक संविधान।

गजल 3 जल्वे–दीदार प्रदशन। तूर–सीरिया का एक पहाड़, जिस पर हजरत मूसा ने ईश्वर का जलवा देखा था। नावीना–अंधा। कदमरजा–कदम रखना, पदार्पण। सूए बाम–छत की तरफ। शोखी–चुलबुलापन। हिना–मेंहदी। परवर–परवरिश करने वाला। तरूमीना–अंदाज। उजलत गजी–कोने में या तनहाई में बैठ जाना। गदा–फकीर। मीना–शराब की बोतल।

4 बाब–अध्याय। सुर्खियाँ–शीर्षक। दिलनेवाज–दिल को लुभाने वाली। खिलवतो–एकान्त तनहाई। हिजाब–छिपना, पर्दा करना। आस्ताँ–घर। शबाब–जवानी।

तीन शेर   सय्यार–ग्रह। मह —चाँद। महर—सूरज। अख्तर—सितारे।

दुष्यंत कुमार

1 हवालों—संदर्भों । ओसारे—सायबान, बरामदे । मासूम—निर्दोष ।

2 आरज़ू—इच्छा, विनती ।

3 दरिया—नदी, । खौफ—भय । मायूस—उदास । रोजनों—सुराखों ।

4 अलावों—तापने के लिए जलाई हुई आग ।

7 सजदे—नमाज पढ़ते हुए जमीन पर सर रख कर ईश्वर को प्रणाम करना ।

9 आदमकद—मनुष्य के कद जितना । आमदरफ्त—आना जाना । जायद—ज्यादा । मैकदे—शराबखाना ।

10 सलीब—सूली । जरीब—नापने का फीता । रकीब—दुश्मन । अदीब—साहित्यकार ।

11 ऋतम्बरा—। माजरा—मामला ।

17 मंजर—दृश्य ।

19 आशियान—घोंसले । मुखातिब—बोल रही है । मुअज्जन—अजान देने वाला । सदाएँ—आवाजें । अजानों—नमाज के लिए बुलावे ।